रू. 25.00

अंक 16

अप्रैल '99 - दिसम्बर '99

चन्द्रताल

लाहुल स्पीति की साहित्यिक-सांस्कृतिक त्रैमासिक

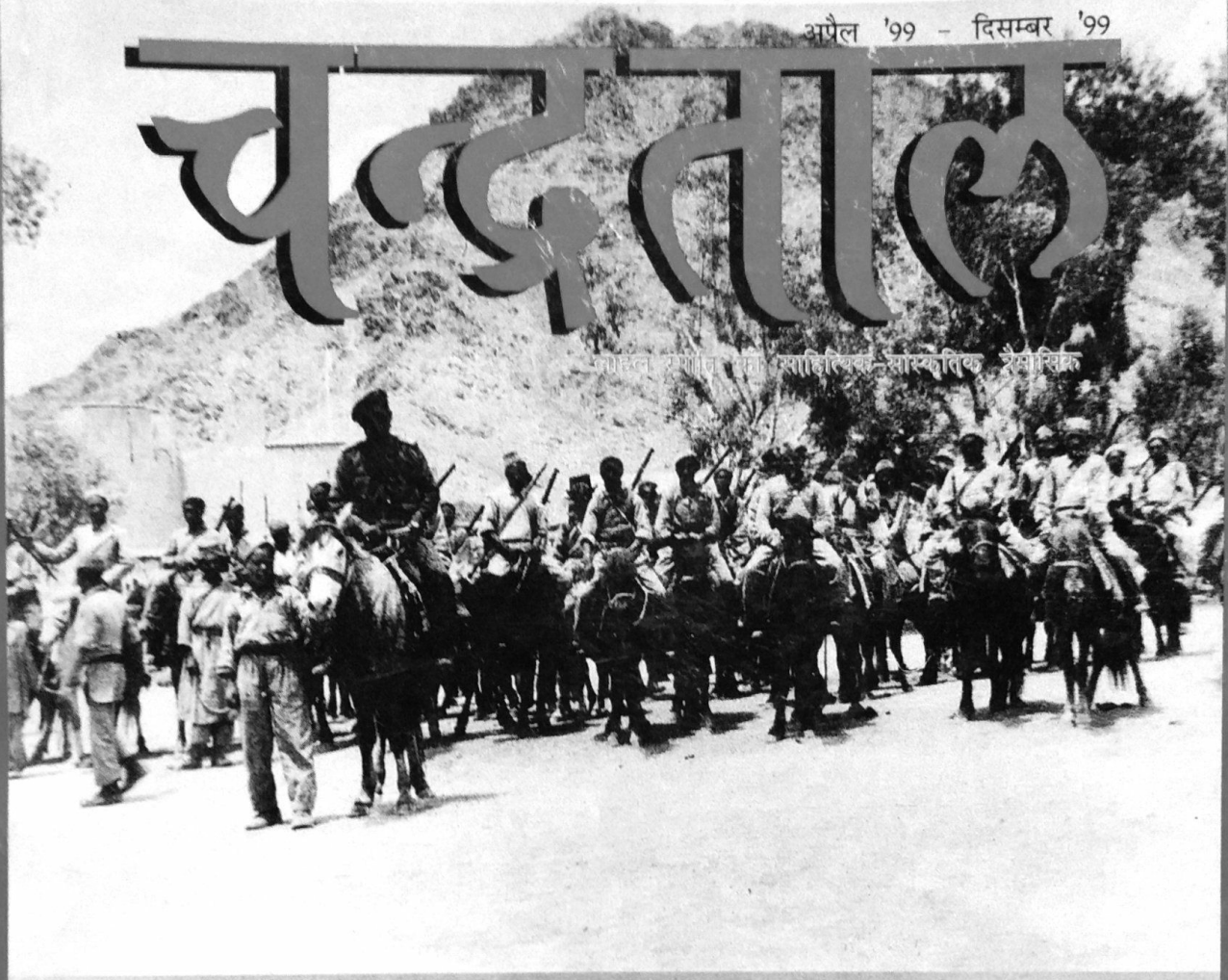

करगिल

तब और अब

1948 - 1999

संस्थापक
स्वंगला एरतोग,
लाहुल-स्पीति में कला व संस्कृति उत्थान हेतु
सोसाईटी (रजि०) संख्या ल स/42/93
सोसाईटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट 21, 1860.

संपादक
सुश्री डॉ० छिमे शाशनी

उप संपादक
बलदेव कृष्ण घरसंगी

संपादकीय सलाहकार
आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा
बिशन दास परशीरा

सम्पर्क:
संपादक - चन्द्रताल
पोस्ट बॉक्स 25, मुख्य डाकघर ढालपुर
कुल्लू-175101 (हि०प्र०) फोन: (01902)-66331

अधिकृत एजेंट :
केलंग
श्री राम लाल, राम लाल की हट्टी
(शिव मन्दिर के पीछे), अप्पर केलंग, लाहुल-स्पीति

उदयपुर
श्री शिव लाल, शिवा जनरल स्टोर,
निकट मृकुला देवी मन्दिर, उदयपुर, लाहुल-स्पीति

चन्द्रताल त्रैमासिक सहयोग राशि:
वार्षिक : एक सौ रुपये
एक प्रति: पच्चीस रुपये

इस पत्रिका का प्रकाशन 'कपार्ट' लोक कार्यक्रम और ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद, भारत सरकार के सहयोग से संभव हो पाया है। पत्रिका पूर्णत: अव्यावसायिक तथा संपादन व प्रबन्धन अवैतनिक है।

स्वंगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक सतीश कुमार द्वारा, नमन, अ०बा० कुल्लू से टाईप सैटिंग तथा मुद्रित एवं नीरामाटी, कुल्लू, हि०प्र० से प्रकाशित।

रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, उनमें संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं।

आवरण

कै० भीम चन्द नवगठित लद्दाख सैनिकों के साथ - 1948

ऑपरेशन विजय अभियान - 1999

क्रम

संपादकीय 2

पाठकीय 3

कविता 4

गरछा - मेरा गांव — *अनाम ल्हारजे*

मेरी ज़िन्दगी — *रीनू कटोच*

इम्यून सिस्टम — *सुरेश विद्यार्थी*

उपदेश दिया बेवकूफ को — *रुचि भुतुंगरू*

कहानी 6

मूक चीत्कार — *राम प्रकाश मेहंदीरत्ता*

कसौटी 10

आर्थिक विकास के बोझ तले दबती सांस्कृतिक चेतना — *बलदेव घरसंगी*

लोक गाथा 11

बरगुल गांव के ढ़ोलक के प्रवास का गुरे गीत — *के. अंगरूप 'लाहुली'*

क्षेत्रीय दृष्टि 13

करगिल युद्ध एवं लद्दाख अभियान

करगिल युद्ध एक लाहुली की दृष्टि में — *छेरिंग 'दोरजे'* 15

लद्दाख मिशन - 1948 — *क० पृथी चन्द* 19

लै.क. खुशाल चन्द — *अशोक ठाकुर* 24

स्व. कै. भीम चन्द के शौर्य की कहानी उनकी जुबानी — *लिप्यांतरण - सतीश 'लोप्पा'* 27

फर्ज़ड हिल पर कब्ज़ा — *तोबगे राम* 34

प्वाइंट 5203 तथा डॉग हिल पर लद्दाख स्काऊट्स का धावा — *सैनिक संस्मरण* 41

करगिल युद्ध - आगामी सहस्राब्दी में खतरे की घंटी — *छेरिंग 'दोरजे'* 44

वाचन पत्र 46

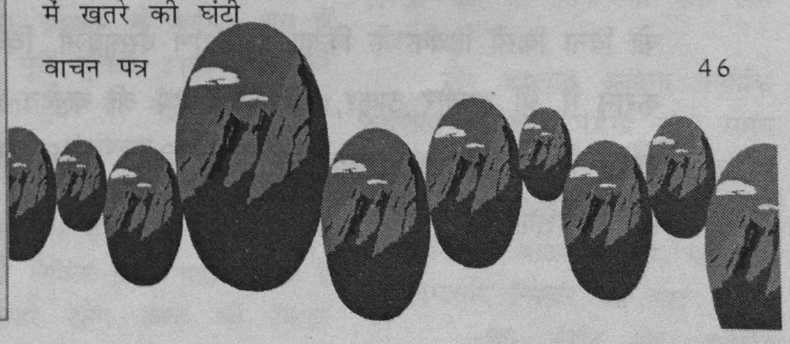

संपादकीय

इस वर्ष के आरम्भ में ही देश को उत्तर-पश्चिमी सीमाओं पर भीषण संघर्ष का सामना करना पड़ा। देश का हर जन-मन देश भाक्ति की भावनाओं से उद्वेलित हो उठा। तो चन्द्रताल में इसकी अनुगूंज न सुनाई दे, यह सम्भव नहीं था। विजय की इस अनुगूंज की पृष्ठ भूमि में हमने सोचा कि इस अंक में लाहुल के उन वीर योद्धाओं के संस्मरणों को स्थान दिया जाए, जिन्होंने स्वतंत्रता के बाद कश्मीर, लद्दाख, करगिल आदि अत्यन्त दुर्गम क्षेत्रों में आक्रान्ताओं का डट कर सामना ही नहीं किया अपितु उन पर शानदार विजय भी प्राप्त की। उनकी यह ऊर्जा, अदम्य साहस और उत्कट संघर्षशीलता अनुकरणीय है। यह अंक, राष्ट्रीय सुरक्षा में सैनिक एंव असैनिक दोनों मोर्चों पर लाहुलियों के अगायित (Unsung) लेकिन महत्वपूर्ण योगदान को उजाग्र करने का प्रयास भी है। ज्यों-ज्यों हम सामग्री जुटाते गए, अधिकाधिक जानकारियां मिलती गईं और हम जुटाते चले गए ताकि अतीत की इन घटनाओं और यादों में से एक राष्ट्रीय भावना उभर कर सामने आए जो नई पीढ़ी के लिए प्रेरणा ही नहीं, आह्वान भी है कि वे राष्ट्र के प्रति समर्पित हों। लाहुली सैनिकों की वीरता एवं शौर्य के ये कारनामे लाहुली युवाओं के लिए विशेषकर प्रेरक सिद्ध होंगे। यद्यपि यह भी सत्य है कि 'ऑप्रेशन विजय' के विजय अभियानों में हमारे युवा सैनिकों का बराबर योगदान रहा है। वे हर मोर्चे पर आगे रहे। लेकिन वर्तमान में सैना में भर्ती के अवसरों की कमी के कारण उनकी हिस्सेदारी ज़रूर कम हुई है, जिसे बढ़ाया जाना चाहिए। इस अंक में 'करगिल प्रसंग' के अन्तर्गत जो संस्मरण हैं उनमें भाषा को कथ्य-अवस्था (spoken form) के अनुरूप ही विना किसी वैयाकरणिक शोधन के ज्यों का त्यों रहने दिया गया है ताकि इनकी प्रामाणिकता और अधिक पुष्ट होकर सामने आ सके। इससे इसकी भाषा में एक विशेष लाहुली पुट आ गया है, जो हिन्दी के पाठकों को कहीं-कहीं शायद अखर सकता है। लेकिन इसे हिन्दी भाषा के एक नए आयाम के रूप में ही हमें देखना चाहिए।

इस अंक को संग्रहणीय बनाने के लिए 'चन्द्रताल' टीम ने भरपूर प्रयास किया है, खासकर श्री सतीश लोप्पा ने वार्ताओं को टेप करने, उन्हें कागज़ पर उतारने के श्रमसाध्य कार्य को विना किसी हिचक के किया। महत्वपूर्ण दस्तावेज़ों, चित्रों तथा सामग्री को जुटाने तथा उपलब्ध कराने में श्री रणवीर ठाकुर, श्री अजेय एवं श्री बलदेव घरसंगी का महत्वपूर्ण योगदान रहा। हमें आशा है कि यह अंक संग्रहणीय सिद्ध होगी। यद्यपि हमारे सुधी पाठक गण ही हमारे सबसे बड़े समीक्षक हैं।

-संपादक

आज जब मैं चन्द्रताल के माध्यम से आपके क्षेत्र, समाज, संस्कृति और समस्याओं से परिचित होता हूं तो मुझे गर्व का अनुभव होता है। मैंने अपने अध्यापकीय जीवन का प्रारम्भ हिमाचल प्रदेश की राजधानी से किया था, फलस्वरूप इस प्रदेश के उन बालकों, युवाओं, वृद्धजनों के प्रति श्रद्धा का भाव है जिन्होंने अपने प्रदेश की महान् परम्पराओं को सुरक्षित रखा है। मैंने विश्व-भ्रमण भी किया है और पृथ्वी पर बसे विभिन्न भूखण्डों में निवास करने वाले साधारण व विशेष व्यक्तियों व जनसमूहों को देखा है, अत: मैं अधिकारपूर्वक कह सकता हूं कि हिमाचल प्रदेश में अब भी ऐसे लोग हैं जो मानव जाति के लिए आदर्श हो सकते हैं।

मुझे गर्व है कि आपके प्रदेश के मान्य मन्त्रियों से लेकर उच्च पदासीन प्रशासकों, अधिकारियों, कर्मचारियों, अध्यापकों के कुछ मार्गदर्शन का मुझे अवसर मिला। एक अध्यापक को ही ऐसा गौरव मिल सकता है। अत: मैं अपनी सम्पूर्ण विनम्रता एवं अधिकार भाव के साथ कह सकता हूं कि चन्द्रताल के माध्यम से आप लोग एक ऐसा कार्य कर रहे हैं जो इस प्रदेश ही नहीं, बल्कि इस महान् राष्ट्र का शिलालेख बनेगा। साथ ही उन जागरूक पाठकों, सुधिजनों से भी अनुरोध करना चाहता हूं जो कई बार कुछ कमियां निकालने का यत्न करते हैं -- सम्भवत: वे नहीं जानते कि जाने-अनजाने वे इस प्रदेश के इतिहास व संस्कृति के संरक्षण में सशक्त माध्यम बन रहे हैं; अत: अपने दायित्व का आस्था व विश्वास के साथ वहन करने की कृपा करें।

डॉ० लक्ष्मी नारायण शर्मा, हिन्दी विभाग, प०वि०, चण्डीगढ़

चन्द्रताल के 15वें अंक में मेरी रचना के प्रकाशन पर आप को बहुत-बहुत धन्यवाद। इस अंक में घरसंगी जी का 'आर्थिक विकास के बोझ तले दबती सांस्कृतिक चेतना' लेख, आज के इस दौर में इस विषय लेखकों व बुद्धिजीवी वर्ग के लिखने की नितांत आवश्यकता है। इस आर्थिक विकास के दौड़ में व्यक्ति जिस प्रकार सम्पन्नता व सुदृढ़ता की ओर अग्रसर हो रहा है, उतना ही वह सांस्कृतिकता, सामाजिकता व व्यवहारिकता की अवहेलना कर अपने मानवीय मूल्यों को खोता जा रहा है, आज वह निजी स्वार्थ और लाभ से परे कुछ भी देखना व सोचना नहीं चाहता, क्या वह वास्तव में तरक्की कर रहा है? यह सोचने का विषय है। सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, धार्मिक व नैतिक विकास के बिना शायद आर्थिक विकास अधूरा होगा। यह उसकी अज्ञानता ही है कि आज सामाजिक रीति-रिवाज़ों व रिश्ते-नातों तक को उसकी नज़र में कोई अहमियत नहीं, खास कर शिक्षित वर्ग से तो यह अपेक्षा नहीं होनी चाहिए, क्योंकि आज शैक्षणिक क्षेत्र में भी लाहुल काफी आगे जा चुका है। अत: व्यवहारिक सहिष्णुता, सहजता, समानता, नम्रता व सहयोग आदि शिक्षा का पर्याय होना चाहिए, तभी हम हर क्षेत्र में विकास कर पाएंगे व विकसित कहलाएंगे। 'अंधेरे में बजी बीन' भी अजय का उत्कृष्ठ लेख रहा। यह लाहुली समाज की वैचारिकता पर करारी चोट है। सहयोग के वर्तमान युग में जबकि पूरी दुनियां 21वीं सदी की ओर जा रही है, कुछ लोग आज भी अपनी संकीर्णता नहीं छोड़ पा रहे हैं व पिछड़े ही रहना चाहते हैं। हालांकि हम हर क्षेत्र में आज भी आगे हैं लेकिन इससे पता चलता है कि हमारे लोग आज भी किनते पानी में हैं। हमारे भी कुछ क्षेत्र, देश, राष्ट्र, सभ्यता, संस्कृति, साहित्य के प्रति कुछ कर्त्तव्य हैं। क्या हम उनका निर्वाहन कर रहे हैं?

शाम सदन

'चन्द्रताल' का एक आर्कषक अंक पढ़ने को मिला। आप के सतत प्रयासों से 'चन्द्रताल' में समय बीतने के साथ-साथ निरतंरता आ रही है अत: हार्दिक बधाईयां स्वीकार करें।

इस अंक के मुख पृष्ठ पर आपने भ्यार का भव्य फोटो छापा साथ ही शुरुआत भ्यार के गुरेह से किया, बहुत अच्छा लगा। 'कूज़ी पर बहस' मुझे लगा कि अन्तिम चरण पर पहुंच चुका है अत: अपनी अन्तिम प्रतिक्रिया विस्तार से अलग लिख रहा हूं आशा है इसी अंक में प्रकाशित हो पाएगा।

कर्नल प्रेम की कविता सटीक और अच्छा लगा। आगे भी कृपा कविता के क्षेत्र में विषय अधिकतर लाहुल पर हो अच्छा रहेगा।

डा० गौतम जी की कहानी 'हौस्पिटल' जब चन्द्रताल में पढ़ा बेहद अच्छा लगा, मगर 4 जुलाई के 'दिव्य हिमाचल' में वही कहानी छपा देखा तो कुछ निराशा सी हुई। इससे 'चन्द्रताल' की अपनेपन की भावना को ठेस सा लगाता हुआ मुझे महसूस हुआ।

लाहुली मानसिकता पर बलदेव जी और अजेय ने जो लिखा सटीक लिखा मुझे तो इतना भी कम लग रहा है।

खैर बदलाव आएगा क्योंकि बदलाव को आना पड़ेगा, मगर समय लगेगा। खुशी यह कि इन सब के बावजूद 'चन्द्रताल' अपने लक्ष्य की तरफ निरन्तर अग्रसर है और 'चन्द्रताल' में लगातार निखार आ रहा है।

-डा० रंजीत वेद, जाहलमा

'गरछा' - मेरा गांव

-ल्हारजे अनाम

वह भीनी-भीनी खुशबू, जो कभी उठती थी,
गांव की मिट्टी से, धो गई वक्त की बारिश उसे।
हर *पाग्बुःट* [1], हर सुकेत, सभी के गिर्द ढूंढा,
नहीं खोज पाया वह बचपन, जो उनके गिर्द कभी
बिखेरता था अपनी खुशियां
यहीं कहीं होता था एक *सःवा* [2], और
अपने तर्कों से सबको निरुत्तर करता *सेहणा* [3]
सड़क खा गई सःवा को, उसके तर्क और अनुभव
दुबक जाते हैं किसी कोने में; हॉप्स और पी-वन
पर होते विवादों के बीच
कहां गए वो *पुःद्* [4], वो गोल चक्कर लगाते *चूरू* [5]
पीछे भागते बच्चे, उनकी किलकारियां
वह सन्तुष्टि कहां, प्रैशर से गेहूं निकालने में
बस सांसों में भरता डीज़ल का काला धुआं
कीरती [6] में तिर लाद *भोउड़ी* [7] जब मायके जाती,
मार्चू [8] से अपनत्व की भीनी-भीनी महक तब-तब आती,
अब सिर्फ, रिश्तों के दरमियां आता कागज़ का रूखापन।
अब बसन्त में नहीं होता तितलियों का नाच।
नहीं होती भौरों की गुंजन
डी.डी.टी. और नुवॉन से पैसे कमाने की
कीमत चुकाता मेरा गांव।
फीके पड़ते उत्सव-त्यौहार नहीं भर पाते
दिलों में जोश और उल्लास के रंग
बड़ों के प्रति सम्मान, छोटों से स्नेह,
अतीत का गौरव-कुस [9]
मूल भावना से दूर बनता बस एक औपचारिकता।
न तो नए *पुला* [10] और *कतर* [11] पर इठलाती कलियां
न वो *झोल्ण्* [12] *पन्डाः* [13] पर इतराता यौवन
वो मन्द पड़ते घुरे के स्वर, उस कशिश को तरसते कान
अपनी पहचान भूल दीवाली के ढर्रे पर कदम बढ़ाता 'खोःगल'।
सारा जोश सारी उमंग 'जलसे' में उंडेलता
थका हारा पहुंचता 'पोरि जातर'
काश! कोई लौटा दे वह 'खुशबू' जो कभी इस
गांव की मिट्टी से आती थी।

---

1. सफेदा (पॉपलर); 2. चौपाल; 3. सयाना; 4. गेहूं निकालने के लिए बना गोल मैदान; 5. मादा याक; 6. किल्टा; 7. बहु; 8. बबरू; 9. फागली; 10. पुलें; 11. चोलू; 12-13. सूखे गेंदे से बनाए विशेष प्रकार के फूल

इम्यून सिस्टम

-सुरेश विद्यार्थी

श्वेत पड़ रहा है
रक्त
फुस फुस धड़कन, फेफड़ों की धौंकनी
कसाव छोड़ चुकी है
महीन धागे में बंधा लीवर
हिसकी के टब में औंधा लटक रहा है।
विषाणुओं का झुण्ड
चक्रव्यूह की रचना कर रहे हैं।
जीवन की फसल को चट कर रहे हैं।
एण्टीबॉडी स्वयं को विदेशी मान बैठे हैं।
विषाणुओं के कंधे से कंधा मिला
अपने ही अन्नदाता का पेट खा रहे हैं।
कर्णधारों के रक्त श्वेत पड़ रहे हैं।
अन्नदाता की धड़कन फुसफुसा गई है।
विषाणुओं का बोलबाला है।
होमोसेपियन तो बेचारा है।
दफन कर दिया जाएगा।
नीली कोशिकाओं पर कीड़ों का आधिपत्य रहेगा।
मृत मांस पर महोत्सव होगा
बारिश अच्छी हुई तो अगले सीज़न में
दबी कसमसाहट से अंकुर फूटेंगे।
विषाणु और भी विषैले होंगे।

मेरी ज़िन्दगी

-रीतू कटोच

कुछ शर्तों के साथ शुरु हुई थी
मेरी ज़िन्दगी,
शायद मैं अनचाही थी,
एहसास रहा यही मेरे दिल में।
यह अधुरा सा अहसास
यही तो थी मेरी ज़िन्दगी।
अश्क बहते गए, दर्द दिल का बढ़ता गया,
लेकिन एक अधूरा सा एहसास
यही तो थी मेरी ज़िन्दगी।
मौसम आते रहे, मौसम जाते रहे,
हर लम्हे के साथ,
बढ़ता रहा अधूरा एहसास, क्या कभी मिटेगी
क्या कभी होगी खत्म,
वह बढ़ता अधूरापन
आज यह सवाल है खुदी से
क्या यही थी मेरी ज़िन्दगी?

उपदेश दिया बेवकूफ को

-रुचि भुतुन्गारू

एक था बंदर पहने वर्दी
नाज़ था और पड़ी थी सर्दी
बंदर बोला ठंड बहुत है।
कुछ सोचकर बोला वह
काश मेरा भी इक घर होता।
जहां मैं भी आराम से सोता।
तभी वहां पर इक चिड़िया आई
और बात उसने बंदर को सुनाई
मेहनत मैंने बहुत की है,
रुकावटें भी तो बहुत सही हैं।
फिर भी मैने हार न मानी।
और घोंसला बनाने की ठानी
जरा घर बनाने की ठान
छोड़ दे यह सब मान
और थोड़ा समय कर दान
मैंने तो है यह घर बनाया
प्यारा सा यह संसार सजाया
ऐसा कह कर वह चलती बनी
थी जो बातों व कर्मों की धनी,
फिर बंदर ने सोचा
अपने मन को दबोचा
अपने सिर को खरोंचा
यह चिड़िया जो बैठी घर में
है रखती मुझसे यह द्वेष,
बुद्धिमत्ती समझती है खुद को,
देती है मुझको उपदेश।
सोचकर बंदर गुर्राया,
मेघों ने भी पानी बरसाया।
बारिश ने जब खुद को थमाया,
बंदर ने खुद को भीगा पाया।
चला बंदर घोंसले की ओर
ज्यों ही नभ में हुई भोर
और उठाई उसने इक लकड़ी
उसे आता देख चिड़िया भी अकड़ी
दोनों में खूब बहस हुई
तीखी बातें जैसे हो सुई
बरसाई दोनों ने एक दूजे के ऊपर
हार कर चिड़िया गिर गई भू पर
शिक्षा कविता की यह हो
उपदेश दो बुद्धिमानों ही को।

एक और लाहुली एवरेस्ट पर

28 मई, 1999 को पर्वतारोही संतोष यादव के नेतृत्व में गए अभियान दल के तीन सदस्य कुशङ दोर्जे, शङ शेरपा और अमर प्रकाश, नेपाली समयानुसार सुबह सात बजकर दस मिनट पर तिब्बत की ओर से पड़ने वाले कानशुङ छोर से एवरेस्ट पर चढ़ने में सफल हुए। यह पहला भारतीय पर्वतारोही दल है जो कानशुङ छोर से एवरेस्ट पर

अमर प्रकाश ऐवरेस्ट शिखर पर

पहुंचा है। कानशुङ छोर एवरेस्ट का सर्वाधिक दुर्गम मार्ग माना जाता है।

नायब सुबेदार अमर प्रकाश ज़िला लाहुल-स्पीति के लाहुल तहसील के ग्वज़ङ गांव के रहने वाले हैं। वे समकालीन लाहुल के अग्रणी पर्वतारोहियों में से एक हैं। संप्रति वे भारतीय थल-सेना के यूनिट असम राईफल्ज़ से सम्बद्ध हैं। चन्द्रताल परिवार उनकी इस सफलता पर हार्दिक बधाई देता है!

मूक चीत्कार

-राम प्रकाश मेहंदीरत्ता

राम लाल शास्त्रों के मर्मज्ञ थे। उनकी यह दृढ़ मान्यता थी कि यद्यपि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र हैं, तो भी उनका फल भोगने में वह नितान्त परतन्त्र है -

"अवश्यमेव भोक्तव्यं कर्माणि शुभाशुभम्।"

किन्तु यह नियम विधाता पर लागू नहीं होता और वह जीव के कर्म फल विधान में स्वेच्छया परिवर्तन कर सकता है। अपनी इसी धारणा के प्रमाण में वे इतिहास प्रसिद्ध बाबर-हिमायूं की घटना का उदाहरण दिया करते थे कि किस तरह बाबर ने ईश प्रार्थना से अपने बेटे हुमायूं की घातक बीमारी अपने ऊपर ले ली थी और उसे मौत के मुंह से बचा लिया था।

अपने इस विश्वास की पृष्ठभूमि में लम्बे समय से बीमार चली आ रही उनकी डॉक्टर पुत्री जब किसी उपाय से भी ठीक न हुई और मृत्यु की काली छाया उसके सिर पर मंडराने लगी, तो वे अधीर हो उठे। संध्या उतर आई थी और वे अपलक अपनी प्रिय पुत्री को एक अप्रत्याशित आशंका से निहार रहे थे। इस पुत्री को डॉक्टरी का प्रशिक्षण दिलाने के लिए उन्होंने क्या नहीं किया था। स्वयं उसका अटैचीकेस उठाए-उठाए वे उसे कभी रोहतक, कभी देहली, कभी चण्डीगढ़ के मैडिकल कॉलेजों में टेस्ट और इन्टर्व्यू दिलवाने के लिए भटकते रहे और अन्ततः उसे डॉक्टर बना कर ही दम लिया। किन्तु अब वही बेटी डॉक्टरी की प्रैक्टिस शुरू करने से पहले ही उनके देखते-देखते काल के ग्रास में जा रही थी।

सहसा उनकी नज़र पुत्री के सिरहाने टंगी मां वैष्णव देवी के चित्र पर जा पड़ी और कमरे में बैठे, खड़े सम्बन्धियों, परिचितों की भीड़ को अनदेखी कर वह मां के आगे एक बच्चे की तरह फफक-फफक कर रो पड़े। अपनी झोली फैला वे कातर वाणी में बोले-

जगदम्बे! तुम सर्व समर्थ हो। इस बच्ची के प्राणों की भिक्षा मुझे दे दो। यदि इस जन्म में इसका जीवन इतना ही बचा हो, तो इसके किसी आगामी जीवन का आयु-भाग, मेरी याचना पर, इसे उधार दे दो। मां! मैंने अपनी इस पुत्री को दुःखी मानवता, विशेष कर प्रसूता स्त्रियों और नव-जात शिशुओं की सेवा-शुश्रूषा करने की ख़ातिर अनेकानेक कष्ट और आर्थिक तंगी सह कर स्त्री-रोग विशेषज्ञ बनाया है। मां! तुम मेरे इस संकल्प की साक्षी हो - इसे पूरा करो। कहते-कहते उनकी वाणी अवरुद्ध हो गई।

वहां एकत्रित जन उन्हें तत्काल सम्भाल न लेते, तो शायद राम लाल वहीं मूर्छित हो जाते। लोगों ने उन्हें समझाया-बुझाया और अनेक प्रकार की तसल्ली दी किन्तु उनकी सान्तवना पिता की अन्तर्व्यथा को क्या कम करती! वह भयंकर रात राम लाल ने पुत्री के सिरहाने बैठ मां से अनवरत प्रार्थना करते बिताई। भोर होने पर बिटिया ने आंखें खोलीं और बड़ी मध्यम आवाज़ में पीने के लिए पानी मांगा। बेटी की चारपाई के पायताने जाने कब से गुमसुम बैठी श्रीमती राम लाल की बेटी की आवाज़ सुनते ही चेतना लौटी और उन्होंने उठकर प्यार से बेटी का सिर अपनी गोद में ले कर उसे पानी पिलाया। यह देख राम लाल जी को लगा कि आदि-शक्ति भक्तवत्सला मां भवानी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली है और उनकी आंखों से प्रेमाश्रुओं की अविरल धारा बह निकली।

कालान्तर में एक चमत्कार और हुआ। राम लाल जी की उक्त डॉक्टर बेटी न केवल पूर्णतया स्वस्थ हो गई, अपितु उसका रिश्ता वर्मा परिवार के एक डॉक्टर लड़के से पक्का हो गया और एक महीने में उसकी शादी भी हो गई तथा वह पितृ-गृह से ससुराल आ गई। ख़ास बात यह हुई कि जिस मुहल्ले में उसकी ससुराल थी, उसका नाम माता रानी का मुहल्ला था जहां मां भवानी का एक भव्य मन्दिर था। लता की ससुराल वाले सभी देवी के परम भक्त थे। राम लाल जी के लिए यह एक प्रत्यक्ष प्रमाण था कि देवी द्वारा स्वीकृत उनकी प्रार्थना का यह दूसरा और अगला चरण है -

"मां उसे प्रसव पीड़ित महिलाओं और नवजात शिशुओं की सेवा के मेरे संकल्प को पूरा करने की व्यवस्था कर रही है।" यह सोच कर वह गद्‌गद् हो गए।

डॉक्टर दामाद पहले से ही एक प्रसिद्ध एवं कुशल चिकित्सक तो था ही, शीघ्र ही उसने अपनी नव विवाहिता डॉक्टर पत्नी के लिए अपने क्लिनिक के साथ 'माता एवं शिशु कल्याण केन्द्र' बनवा दिया। उक्त सैन्टर का उदघाटन प्रान्त के एक सुप्रसिद्ध नारी रोग विशेषज्ञ ने किया और इस अवसर पर नगर भर के प्रतिष्ठित लोग उपस्थित हुए। राम लाल जी भी सपत्नी आमन्त्रित थे और वहां की शोभा को देख-देख कर भाव-विभोर हो रहे थे। इसके बाद छः महीने तक बेटी अपने मायके नहीं आई। मैटरनिटि वार्ड के कार्य-भार के कारण पुत्री अत्यधिक व्यस्त हो गई होगी, यह सोच कर राम लाल मग्न रहे। किन्तु किसी सामाजिक अवसर पर जब वह एक दिन के लिए पति सहित पितृ-नगर आई तो उसे देख कर राम लाल जी के पांव तले की ज़मीन खिसक गई।

मैटरनिटि होम के उद्‌घाटन अवसर पर सभी के आकर्षण का मुख्य केन्द्र उनकी सुन्दर और स्वस्थ डॉक्टर बेटी अब सूख कर कांटा हो गई थी और उसका रंग काला पड. गया

था। उसकी भवें तनी हुई और बड़ी-बड़ी आंखें ऊपर चढ़ी हुई थीं। उसे पहली नज़र देखने से डर लगता था। उस नागरिक समारोह में बेटी से पूछने पर कि यह तुम्हें क्या हो गया है। उसका संक्षिप्त उत्तर था - कुछ नहीं, मैं ठीक हूं।

किन्तु स्पष्ट ही वह ठीक नहीं थी। उसकी मां ने जब डरते-डरने दामाद से पूछा, बेटा। क्या बात है लता को यह क्या हो गया है? तो वह बोला, इसने आजकल खाना पीना बन्द कर रखा है और यह किसी का कहना भी नहीं मानती।

पर ऐसा क्यों?

यह तो आप इसी से पूछ लीजिए।

मां की प्रश्न-सूचक नज़रें बेटी की तरफ उठ गईं, किन्तु उसने कोई जवाब नहीं दिया।

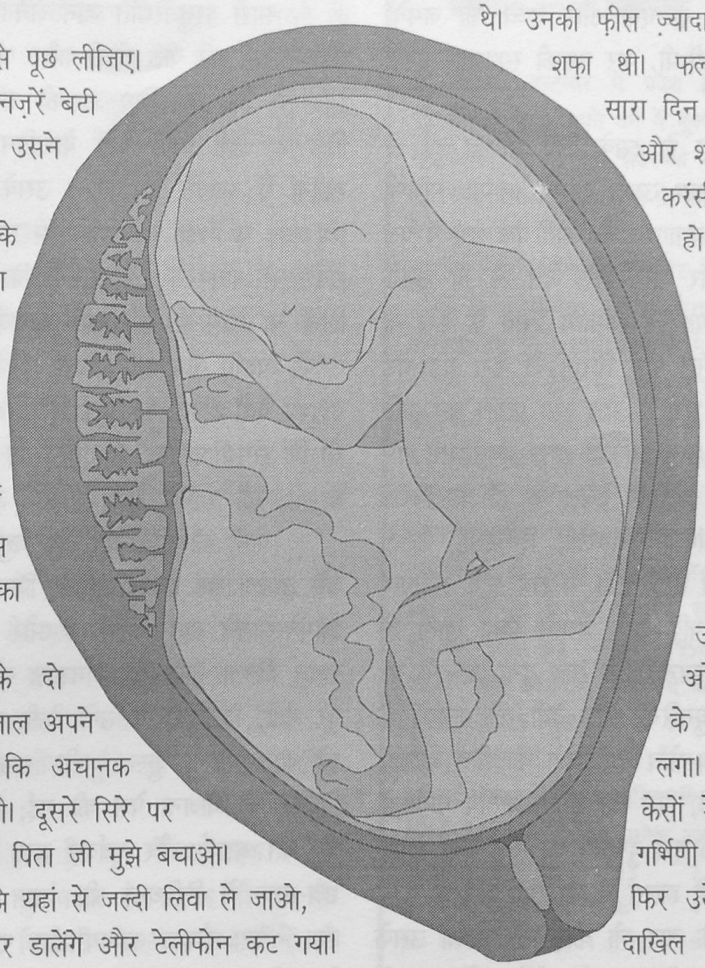

बेटी और दामाद के विदा हो जाने पर भी लता का वह भयंकर रूप राम लाल जी के मानस-चक्षुओं के सामने बना रहा। बेटी का काला रंग, तनी हुई भृकुटी और चढ़ी हुई बड़ी-बड़ी आंखें उन्हें बरबस चण्डी के विकराल रूप का स्मरण करा रही थीं।

उपरोक्त घटना के दो महीने बाद एक सायं राम लाल अपने अध्ययन कक्ष में बैठे थे कि अचानक टेलीफोन की घण्टी बज उठी। दूसरे सिरे पर उनकी डॉक्टर बिटिया थी - पिता जी मुझे बचाओ। ये लोग मुझे मार रहे हैं। मुझे यहां से जल्दी लिवा ले जाओ, नहीं तो ये मुझे जान से मार डालेंगे और टेलीफोन कट गया। राम लाल हड़बड़ा गए।

"हे राम, यह क्या हो गया?"

और उन्होंने अपने छोटे बेटे को आदेश दिया कि वह किसी मित्र को अपनी कार में साथ ले जाए और दीदी को तुरन्त लिवा लाए। जब तक बेटी आ नहीं गई, उनकी जान में जान नहीं आई।

बिखरे बाल, परेशान हाल सुबकती पुत्री को उन्होंने दिलासा दिया -

बेटी चिन्ता की कोई बात नहीं, सब ठीक हो जाएगा।

परन्तु इस अचानक उपद्रव का कारण क्या हो सकता है, इसका रहस्योद्घाटन तो बेटी ही कर सकती थी। उन्होंने अपनी पत्नी को समझाया कि इस विषय पर अभी कुछ दिन लता से कोई बातचीत न की जाए और पहले उसकी मनःस्थिति ठीक होने दी जाए। स्वयं उन्होंने बेटी और दामाद की खटपट को उनके बीच की किन्हीं भ्रान्तियों का नतीजा भर मानने की कोशिश की, किन्तु अपने अन्तःस्तल में वे और उनकी पत्नी इस परिवर्तन का सही कारण जानने के लिए व्याकुल थे।

धधीरे-धधीरे जो रहस्य खुला वह यों था -

लता के पति विवाह-पूर्व से ही एक सफल चिकित्सक थे। उनकी फ़ीस ज़्यादा न थी और उनके हाथ में शफ़ा थी। फलस्वरूप उनके क्लिनिक पर सारा दिन रोगियों का तांता लगा रहता और शाम को उनके मेज़ का दराज करंसी नोटों से ठसा-ठस भरा होता।

धन बरसने से धन-लोलुपता घटती नहीं, वरन् बढ़ती है। स्त्री विशेषज्ञ बीवी को नए खोले मैटरनिटि होम का कर्ता-धर्ता बना कर डाक्टर वर्मा को लगा कि उनके हाथ पैसे बनाने की मशीन लग गई है और वे उसे प्रसव के केस करने की अपेक्षा एम.टी.पी. और गर्भपात के केस करने के लिए उकसाने लगा। कारण स्पष्ट था। प्रसव के केसों में झंझट ज़्यादा था - पहले गर्भिणी स्त्री के विभिन्न टेस्ट करो, फिर उसे इनडोर मरीज़ के रूप में दाखिल कर उसके रक्त चाप की निगरानी रखो और उसके अन्यान्य छोटे-मोटे रोगों का इलाज करो। प्रसव के बाद जच्चा और बच्चा दोनों की देख-भाल में वक्त लगाओ। तब कहीं जा कर बंधी-बंधाई फ़ीस मिलती थी, जबकि एम.टी.पी. के केसों में पति-पत्नी की लिखित स्वीकृति ली, गर्भ गिराने के दो-एक टीके लगाए, प्रसव-पीड़ा उत्पन्न की, रक्त-स्त्राव शुरू हुआ तो शल्य यन्त्रों से बच्चा-दानी खोली, भ्रूण को खींच कर चिलमची में डाला और छुट्टी पाई। प्रसव की अपेक्षा फ़ीस भी इसमें कहीं ज़्यादा मिलती थी और वह भी अग्रिम। किन्हीं गर्भ-पात के केसों में तो और भी मौज थी क्योंकि ऐसी स्थिति में गर्भ प्रायः अवैधध होते थे और राज़दारी से काम लेना पड़ता था। फलस्वरूप फ़ीस कई

गुना ज़्यादा हाथ लगती थी।

पति की इच्छा की अवहेलना कर लता ने कंवारी लड़कियों के गर्भपात करने से तो साफ़ इन्कार कर दिया - यह कह कर कि यह घोर कलंक है, इस से चिकित्सा-व्यवसाय बदनाम होता है किन्तु एम.टी.पी. न करने कि लिए वह अपने डाक्टर पति को मना न कर सकी। डॉक्टर वर्मा का कहना था कि एम.टी.पी. तो बिल्कुल वैध है और सरकार स्वयं इस का अनुमोदन करती है। यदि कोई विवाहित महिला शारीरिक, मानसिक या आर्थिक कारणों से एक और बच्चे को जमने, पालने मे असमर्थ है, तो एम.टी.पी. कर उसकी सहायता करना हम डाक्टरों का फ़र्ज़ है।

लता जब अनमने भाव से इसके लिए सहमत हुई तो इस कृत्य का दूसरा जघन्य रूप उसके सामने आया। गर्भिणी महिलाएं डाक्टरी जांच से यह पता कर के आतीं कि गर्भ में पल रहा भ्रूण लड़की की है और उसे गिरा देने में ही उनके परिवार की भलाई है। हुआ यह कि सामान्य प्रसव के केस तो न के बराबर आए और फ़ीमेल भ्रूण गिराने के केस धड़ा-धड़ आने लगे। तीसरे महीने तक भ्रूण के सब अंग प्रत्यंग बन जाते हैं। उस भ्रूण को ड्रग्ज़ और शल्य प्रक्रिया द्वारा ज़बरदस्ती गर्भ से बाहर कर दिया जाता है। ऑप्रेशन टेबल पर ही वह निरीह अजात शिशु कुछ मिनट कांपता, सिहरता, सिमटता, फैलता और लता के देखत-देखते दम तोड़ देता। ये सब भ्रूण अनिवार्य रूप से लड़कियों के होते। यदि उन्हें जन्मने दिया जाता तो क्या वे भोली-भाली कन्याएं नवरात्रों के बाद दुर्गा अष्टमी पर उजले परिधान पहन, लाल चुनरियां ओढ़ देवी की कंजकों के रूप में पूजी न जातीं - सोच-सोच कर लता का दिल बैठता। वह स्वयं भी तो एक कन्या है, फिर वह इन सजातीय कन्याओं का वध क्यों करती है। उसके इस दुष्कृत्य का फल क्या होगा? और एक दिन उसने किसी भी हालत में यह पाप कर्म न करने का निश्चय कर लिया। उसके बाद जो कोई भी महिला उसके पास एम.टी.पी. करवाने के लिए आई उसे उसने या तो समझा बुझा कर विदा कर दिया या ऐसा करने में अपनी असमर्थता प्रकट कर दी।

पति को पता चला तो पहले तो उसने पत्नी को समझाने की कोशिश की और जब इसका कोई असर न हुआ तो धमकाना और फिर उस पर हाथ उठाना शुरू किया, किन्तु लता टस से मस न हुई। उल्टा वह आत्म-ग्लानि से भरने लगी और विक्षिप्त रहने लगी। रातों को सोते में वह चौंक कर उठ जाती। उसे लगता कि उसके द्वारा गिराए गए सारे भ्रूण प्रेत बन कर उसके इर्द-गिर्द मंडरा रहे हैं और उस से प्रतिशोध लेने के लिए चीख़ रहे हैं। फलस्वरूप उसकी नींदें उड़ गईं, भूख मर गई और रंग काला पड़ गया। ऐसी स्थिति में पति ने उसे अलग कमरे में सोने के लिए विवश किया और इस दौरान उसकी एक चहेती नर्स बे रोक-टोक उसके शयन-कक्ष में आने-जाने लगी।

और एक दिन वह स्थिति आ गई जब उसे गली के एक एस.टी.डी. बूथ से अपने पिता राम लाल को फोन करना पड़ा कि वे उसे लिवा ले जाएं अन्यथा वे अपनी प्रिय पुत्री से हाथ धो बैठेंगे।

सारी वस्तु-स्थिति जान लेने पर राम लाल जी ने अपनी बहादुर पुत्री की पीठ ठोंकी और पति के पाप -कर्मों में उसका साथ न देने के लिए उसकी प्रशंसा की। तीन कपड़ों में पितृ-गृह चली आई बेटी के दिन, सप्ताहों में और सप्ताह महीनों में बदलने लगे किन्तु उसके ससुराल से किसी ने एक पत्र तक न लिखा और न राम लाल जी के स्वाभिमान ने ही उन्हें इस बात की इजाज़त दी कि वे उपने समधियों को कुछ लिखें या फ़ोन पर ही बात चलाएं। पुत्री की इस हालत पर उनकी पत्नी अवश्य चिन्तित थी, किन्तु राम लाल जी को अदृश्य देवी-शक्ति पर पूरा भरोसा था और उनका मन कहता था कि समय पा कर सब ठीक हो जाएगा - कैसे और कब ये वे भी नहीं जानते थे।

पत्नी की उद्विग्नता जब बहुत बढ़ी तो उन्होंने एक दिन उसे अपना वह स्वप्न सुनाया जिसमें उनकी पुत्री और दामाद आमने-सामने खड़े पश्चाताप और प्रेम के आंसू बहा रहे थे। समय बीतता गया और रामलाल जी का स्वप्न साकार होना तो दूर रहा, हितैषियों ने उन्हें बेटी का मामला कोर्ट में ले जाने की बात कहनी शुरू की। समधियों की ओर से सम्बन्ध विच्छेद की योजना पेश की गई; किन्तु राम लाल जी ने सब को धत बताई और पूर्ववत् मग्न रहे। लता जनक-जननी की छत्र-छाया में निश्चिन्त थी। काल चक्र अबाधधगति से चलता रहा - इस दौरान अध्ययनशील राम लाल जी ने एक पत्रिका में "मौन-चीख" शीर्षक वाला एक लेख पढ़ा, जिसमें लिखा था -

अमरीका में बनी 38 मिनट की 'साइलेन्ट स्क्रीम' नाम की एक फ़िल्म में पूरे ब्योरे के साथ यह दिखाया गया है कि मां के गर्भ में पल रहा भ्रूण अपनी हत्या के समय मरते-मरते किस तरह चीखता है। इस फ़िल्म में प्रत्यक्ष रूप से यह दिखाया गया है कि बारह सप्ताह यानी तीन माह के भ्रूण को गिराते समय उसकी कैसी करुण स्थिति हो जाती है।

'राईट ऑफ़ लाईफ़' नाम की संस्था ने मानवता को जगाने वाली इस फिल्म की बहुत सराहना की है। अमरीका के तत्कालीन राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन ने जनवरी 1985 में यह

फिल्म देखी थी। वे इस से बहुत प्रभावित हुए।

पहले कुछ डॉक्टर अज्ञान-वश यह मानते थे कि पांच महीने के बाद ही गर्भस्थ भ्रूण में प्राणों का संचार होता है, इसलिए पांच महीनों के अन्दर की हत्या, हत्या नहीं होती। किन्तु फ़िल्म ने यह सिद्ध कर दिया है कि भ्रूण कितनी ही उमर का क्यों न हो, उस में प्राण पड़ चुके होते हैं।

न्यूयार्क नगर के प्रसिद्ध डॉक्टर नेल्सन कहते हैं, भ्रूण को अपने ऊपर होने वाले खूनी हमले का पता चल जाता है, इस लिए वह शल्य-क्रिया वाले हथियार के प्रहार से बचने के लिए अपनी दुःखद स्थिति में प्रयत्न करता है। भ्रूण के दिल की धड़कन बढ़ जाती है क्योंकि वह अनुभव करता है कि कोई आदमी उसकी हत्या करना चाहता है, भ्रूण अपना मुंह खोल कर चीखता है।

लेख पढ़ने के बाद उन्हें लगा कि पति के दबाव में आकर लता ने जो भ्रूण हत्याएं कीं, उससे मां चण्डिका ने उसके शरीर पर अपना आधिपत्य कर लिया और उसे न केवल अपना रूप प्रदान किया अपितु डाक्टर वर्मा को एक ज़ोर का धक्का देकर वह वहां से चली आई।

लता के पति-गृह न रहने की कालावधि में उसके ससुराल वालों पर अनेकानेक विपदाएं आईं यथा - उसकी सास को दिल का दौरा पड़ा और मरते-मरते बची।

ससुर ने गम्भीर रूप से बीमार हो कर खाट पकड़ ली। उनका एक ट्रक दुर्घटनाग्रस्त हो गया, जिससे एक राह-गुज़र की मौत हो गई और मुकदमें पर उनका बहुत सा पैसा खर्च हुआ।

स्वयं लता के पति डाक्टर वर्मा स्नायविक विक्षेप के शिकार हो गए। उनका शरीर क्षीण, बुद्धि भ्रमित और क्लिनिक बन्द हो गया।

तब वर्मा परिवार को लगा कि एक के बाद एक ये सारे उत्पात लता के साथ उनके दुर्व्यवहार के कारण ही हुए हैं। और फिर एक दिन अपनी बिरादरी के गण-मान्य लोगों को इकट्ठा कर वे लता के पिता के यहां गए, उनसे अपनी पूर्व-कृत गल्तियों तथा लता के प्रति अशोभनीय वर्ताव के लिए क्षमा-याचना की, भविष्य में ऐसी भूल न करने का आश्वासन दिया और अनुनय-विनय करते हुए बहु को सादर लिवा ले गए।

अब लता एक मनमोहिनी बालिका की मां है तथा अपने क्लिनिक पर केवल प्रस्विनी महिलाओं तथा नव-जात शिशुओं का ही चिकित्सा कार्य करती है। उसका रंग साफ हो गया है, शरीर गदरा गया है और बड़ी-बड़ी आंखें जगदम्बा नैना देवी की आंखों जैसी बड़ी मनोहरी लगती है। सास-ससुर और अन्य परिजन उस पर जान छिड़कते हैं तथा डॉक्टर वर्मा तो हर वक्त उसके नाम की माला जपते रहते हैं।

स्व. श्री उरज्ञान भुतुङरू

श्री उरज्ञान भुतुङरू का जन्म लाहुल तहसील के गांव लोप्पे (लोट) में 11 नवम्बर, 1943 में हुआ। उनके पिता का नाम फुन्चोग छेरिंग भुतुङरू था। मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद इन्होंने उच्च शिक्षा के लिए डी.ए.वी. कॉलेज जालन्धर में प्रवेश लिया। वहां अन्तरविश्वविद्यालय प्रतिस्पर्धाओं में वे अपने वर्ग में मुक्केबाज़ी के चैम्पियन थे तथा बाद में श्रीलंका में हुए एक प्रतिस्पर्धा में विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व भी किया। एफ.ए. पास करने के बाद जब बी.ए. ऑनर्स अन्तिम वर्ष में अध्ययनरत थे, उसी दौरान उन्होंने 15 अप्रैल, 1963 को भारतीय सेना में सैकण्ड लेफ़्टीनेंट के पद पर कमीशन प्राप्त किया। 1965 के भारत-पाक युद्ध के दौरान उन्होंने भारतीय आर्टलरी के अन्तर्गत देश की पश्चिमी सीमाओं में इस युद्ध में भाग लिया। 1978 में उन्हें भारतीय सेना से सीधे भारत तिब्बत सीमा पुलिस में कम्पनी कमाण्डर के पद पर नियुक्ति प्रदान की गई। एक लम्बे समय तक वे विभिन्न स्थानों में भ.ति.सी.पु. के असिस्टैंट कमाण्डैंट के पद पर कार्यरत रहे। तदन्तर 1 अक्तूबर, 1987 से अप्रैल, 1991 तक बतौर कमाण्डैंट, 12वी. बटालियन, चण्डीगढ़ में पंजाब सचिवालय तथा बैंकों की सुरक्षा का कार्यभार संभालते रहे। 1996-97 में 5वीं बटालियन के कमाण्डैंट के रूप में जम्मू-कश्मीर में कार्यरत रहे और उसके बाद जनवरी, 1998 में उन्होंने अतिरिक्त डी.आई.जी./निदेशक, भा.ति.पु. अकादमी देहरादून का पदभार ग्रहण किया।

वे एक कुशल यौद्धा, अन्यन्त ईमानदार एवं अनुशासन के पक्के व्यक्ति थे। अपने इस सैन्य एवं पुलिस सेवा काल में उन्हें अनेक अंलकरणों से सम्मानित किया गया। अपने इस सैन्य एवं पुलिस सेवा काल में उन्हें अनेक अलंकारों से सम्मानित किया गया।

1. समर सेवा स्टार, 1965
2. रक्षा पदक, 1965
3. सैन्य सेवा पदक, 1966
4. कठिन सेवा पदक, 1969
5. संग्राम पदक, 1971
6. 25वां स्वतंत्रता वर्षगांठ पदक,
7. भारतीय पुलिस पदक, 1985
8. राष्ट्रपति पुलिस पदक, 1994
9. स्वर्ण जयन्ती स्वतंत्रता दिवस पदक, 1998

1963 से 1998 तक के अपने लम्बे सेवा काल में उन्होंने करीब 18 विभिन्न ट्रेनिंग एवं कोर्सेज़ सफलतापूर्वक किए। जिन में अपारंपरिक युद्ध कोर्स, बेसिक पर्वतारोहण कोर्स, बेसिक स्की कोर्स, पारम्परिक युद्ध कोर्स तथा कोर्स ऑन मैनेजमेंट ऑफ ट्रेनिंग आदि उल्लेखनीय हैं।

9 सितम्बर, 1999 के दिन देहरादून में श्री भुतुङरू का आकस्मिक निधन हो गया। इस तरह एक कुशल, वीर, कर्मठ, ईमानदार एवं अनुशासनप्रिय सैनिक हमारे बीच से उठ गए। उन की अन्त्येष्ठि हरिद्वार में पूर्ण सैनिक सम्मान के साथ की गई।

चन्द्रताल की ओर से श्रद्धाजंलि!

-संपादक

करगिल प्रकरण और सप्तऋषि राजमार्ग का सैन्य महत्त्व

करगिल में आपरेशन विजय की सफलता के पश्चात जम्मू-कश्मीर में आतंकवादी घटनाओं में वृद्धि, पाकिस्तान में सेना द्वारा तख्ता पलट तथा अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादियों को प्रशिक्षण व संरक्षण, विमान अपहरण कांड में तालिबान सरकार का दोगलापन तथा रूस के विघटन के पश्चात मध्य एशिया महाक्रीड़ा में नए समीकरणों का उभरना, भारत की उत्तरी-पश्चिमी सीमाओं की सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकारों को नए सिरे से सोचने पर विवश करता है। जम्मू-कशमीर क समूचे क्षेत्र (2,22,236 वर्ग कि. मी.) जिसमें पाकिस्तान के कब्ज़े में 78,114 वर्ग कि. मी., चीन के कब्ज़े में 37,555 वर्ग कि.मी. तथा इसमें पाकिस्तान द्वारा चीन को अवैध रूप से दिया गया क्षेत्र जो 5,180 वर्ग कि.मी. है, इस प्रकार भारत के पास शेष 1,01,387 वर्ग कि.मी. ही रहता है। इतना सारा सीमा-क्षेत्र खोने के पश्चात भारत के पास नव महाक्रीड़ा में सीधे तौर पर खेलना असम्भव सा है। केवल एक ही विकल्प है कि कैसे अपनी उत्तरी-पश्चिमी सीमाओं को सुदृढ़ करें। सुरक्षा के लिए वायु के साथ थल मार्गों का कैसा जाल बिछाया जाए कि युद्ध की स्थिति में वह सुरक्षित व सुगम हो। अत: हमें यह जानना आवश्यक है कि हमारे पास क्या विकल्प है। श्रीनगर-लेह राजमार्ग दुर्गम व असुरक्षित है। तो क्या जम्मू-डोडा-नुन क्षेत्र-करगिल मार्ग या फिर शिमला-कल्पा-प्रांगला-लेह मार्ग या फिर मनाली-लेह तथा मनाली-बारालचा-जस्कर-नीमू मार्ग विकल्प के रूप में उभरेंगे? इनमें से ऐसा कौन सा विकल्प है जो इस वक्त उत्तरी-पश्चिमी सीमाओं की सुरक्षा के लिए सैन्य जीवन रेखा बन सकती है? इन विकल्पों को सुनिश्चित करने से पहले इन्हें राष्ट्रीय आवश्यकताओं व मापदण्डों पर रखना होगा तथा इनके सुरक्षित होने के अतिरिक्त इनकी व्यवहारिकता, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य व निर्माण खर्चों को भी ध्यान में रखना पड़ेगा। इन विकल्पों की जांच-परख के बाद यह बात साफ तौर पर, खासकर सन् 1947 के बाद मनाली-रोहतांग-बारालाचा ही ऐसा मार्ग है, जो सबसे सुरक्षित व भारतीय सेना के लिए जीवन रेखा साबित हुई है। अगर हम इस मार्ग के पिछले इतिहास में भी जाएं तो ह्वयूनसांग से लेकर मोरावियन मिश्नरियों तक ने इस मार्ग को ही अपनाया। ब्रिटिश काल में महाक्रीड़ा के लिए गुप्त मिशन इसी मार्ग से भेजा गया था। भारत की पश्चिमी तिब्बत से व्यापार का एक मार्ग यह भी रहा है, तथा सन् 1962 तक उपयोग में लाया जाता रहा है। सभी विकल्प खुले हैं, परन्तु राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से इस समय यह मार्ग सबसे उपयुक्त है। क्योंकि यह बना बनाया मार्ग है, ज़रूरत है तो सिर्फ रोहतांग दर्रे व बारालाचा दर्रे में सुरंग निर्माण द्वारा इस मार्ग को और अधिक सुगम व वर्ष भर यातायात के लिए खुला रखने की। एक विकल्प और है, जो इसी मार्ग का हिस्सा है जो कि बारालाचा से थोड़ा आगे योनम और छारव नदी के साथ-साथ ज़ंसकर घाटी होते हुए, जहां 70 कि. मी. छोड़ कर जीप योग्य सड़क पहले ही निर्मित है, यह मार्ग लद्दाख में निमू के स्थान पर श्रीनगर-लेह मार्ग से मिल जाएगा। इस तरह उत्तरी-पश्चिमी सीमाओं की सुरक्षा के लिए सप्तऋषि (क्योंकि इन तीन राजमार्गों का रेखा-चित्र सप्तऋषि तारा मण्डल से मिलता है इसलिए इन राजमार्गों का नामकरण सप्तऋषि उपयुक्त रहेगा)। राजमार्ग का जाल बिछ जाएगा, जिन पर हमारी सेनाएं निर्विघ्न आवाजाही करेगी तथा युद्ध के समय सुरक्षित होकर सीमाओं के लिए रसद तथा कुमुक ले जा सकेगी।

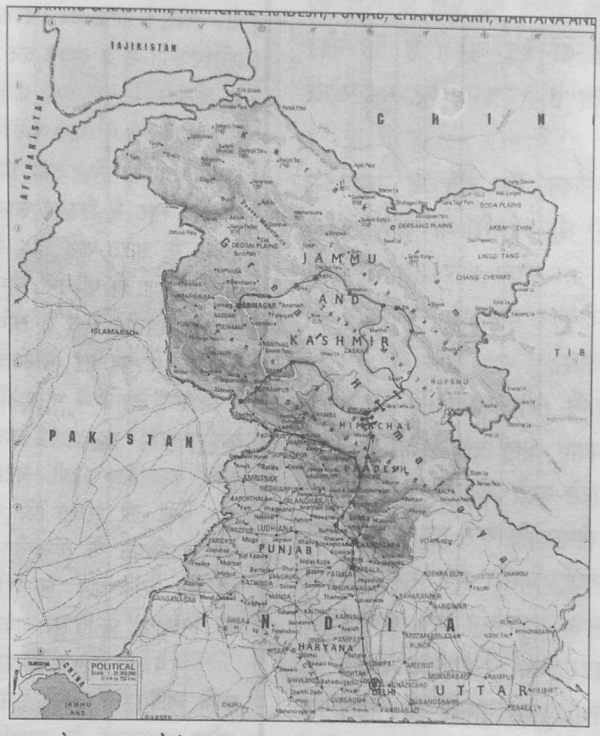

-बलदेव कृष्ण घरसंगी

बर्गुल गांव के ढोल के प्रवास का घुरे गीत

-कं. अंगरूप लाहुली

द्धारू आगेरू ए मूजेरी बूटी ए।
द्धराना पीछे ओ, कुवां ठाण्डा पानी।।

पुरा समय बर्गुल गांव के फाटक के सामने भोज के वृक्षों का एक झुरमुट वन था, और फाटक की पिछली ओर स्वच्छ एवं शीतल जल से परिपूर्ण एक जलाशय।

संगलाना सेरी ए, साला बीगूड़ी ए।
संगलाना सेरी ए, साला बीगूड़ी ए।।

एक समय की कथा है कि बर्गुल गांव के संगला परिसर के खेतों की सारी फसल अनावृष्टि के कारण बिगड़ गई अर्थात सूख गई।

ग्राएं बारागुला, डूणा-चूणा कीती ए।
ग्राएं बारागुला, डूणा-चूणा कीती ए।।

इस दैविक विपत्ति से उभरने के लिए बर्गुल गांव वाले परस्पर बात-चीत करने लगे कि -

ग्राएं मझेला ए, कुणु-कुणु सैहणा ए ।
ग्राएं मझेला ए, कुणु-कुणु सैहणा ए।।

हमारे गांव में ऐसे कौन-कौन से सयाने (प्रौढ़ व्यक्ति) विद्यमान हैं जिन से हमें इस बार फसल बिगड़ने के कारणों का पता लग सके।

बूटा मासी रामा, ग्रांयीं रे सैहणा ए ।
बूटा मासी रामा, ग्रांयीं रे सैहणा ए।।

आपस में पूछ-ताछ करने पर उन्हें पता चला कि मासी राम नामक एक वृद्ध गांव में सब से बड़ी अवस्था का सयाना व्यक्ति है। गांव वाले उन्हें सभा स्थल पर बुलाकर ले आए और उन से फसल बिगड़ने के कारण पूछने लगे।

उन्होनें गांव वालों से कहा कि अच्छा यही होगा कि फसल सूख जाने के सही कारणों को जानने के लिए ग्रह-नक्षत्रों का ज्ञाता ज्योतिषी गुरु दोर-जे-नम-ग्यल, जो इस समय पट्टन वादी में वरी नामक गांव में निवास कर रहे हैं उन्हें यहां बुलाकर इस अवसाद के विषय में पूछ लिया जाए। उन की सलाह पर -

जोड़ी बारागुला, वरी जोगू भेजी ए।
जोड़ी बारागुला, वरी जोगू भेजी ए।।

गांव वालों ने ज्योतिष शास्त्र का पण्डित गुरू दोर-जे-नम-ग्यल को बुलाने के लिए बर्गुल गांव का ही एक जोड़ी यानी दो व्यक्ति वरी गांव भेजे।

गुरु दोर-जे-नम-ग्यल, पूछूणी लागी ए।
जोड़ी बारागुला, किजी कामे आयी ए।।

उस जोड़े ने वरी गांव पहुंचने पर गुरू दोर-जे-नम-ग्यल उन से पूछने लगे - हे! बर्गुल के युगल। आप दोनों यहां किस काम के लिए आए हैं?

जिया मेरे सहिबाये, त्वें शादने आयी ए।
संगलाना सेरी ए, साला बीगुड़ी ए।।

वे कहने लगे - हे! मेरे महाशय। आप चिरंजीवी हों, हम आपको बुलाने के लिए यहां आए हैं। क्योंकि इस वर्ष हमारे संगला परिवार के खेतों की सम्पूर्ण फसल नष्ट हो गई है। गांव वाले आप से फसल बिगड़ने से सम्बन्धित कारणों को जानना चाहते हैं। अतः कृपया आप बर्गुल पधारने का कष्ट कीजिएगा।

गुरु दोर-जे-नम-ग्यल, शादी कारी आणी ए।
शादी कारी आणी ए, बारागुला ग्रांवें ए।।

वे उस जोड़े ने गुरु दोर-जे-नम-ग्यल को आमन्त्रित कर ले आए। उन के आमंत्रण पर दैवज्ञ बर्गुल गांव पहुंचे।

ग्रांयी बारागुला, शिबे शागुणा कीती ए।
ग्रांयी बारागुला, शिबे शागूणा कीती ए।।

ज्योतिष शास्त्री के आगमन पर बर्गुल गांव वालों ने परम्परानुसार सर्वप्रथम शुभ और शकुन के लिए ग्राम देवता की पूजा अर्चना की।

गुरु दोर-जे-नम-ग्यल, पातूरी हेरी ए।
गुरु दोर-जे-नम-ग्यल, पातूरी हेरी ए।।

उस के पश्चात गुरु दोर-जे-नम-ग्यल, अपनी पुस्तकों के बेष्टन खोलकर पातूरी यानी पंचांग (= तिथि, वार, योग, नक्षत्र तथा मरण - इन पांच अंगों से युक्त तिथि-पत्र) देखने लगा।

पातूरी अन्दूरे ओ, ढोलो कीरे डोज़े ओ।
पातूरी अन्दूरे ओ, ढोलो कीरे डोज़े आ।।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार संगला परिवार के खेतों की फसल सूखने का कारण उन की अपनी देवकीय ढोलकी के प्रवास होने का दोष (अपशकुन) निकला।

आपुणी ढोलोकी ए, फिरी कारी आणी ए।
आपुणी ढोलोकी ए, फिरी कारी आणी ए।।

दैवज्ञ दोर-जे-नम-ग्यल ने गांव वालों को कहा कि फसल सूखने का कारण आप लोगों के देवकीय ढोल के प्रवास होना है। अतः आप लोग अपनी ढोलकी को पुनः वापस ले आएं।

ज्ञातव्य है कि बर्गुल गांव की ढोलकी किसी समय थोरंग गांव वाले अपने यहां ले गए थे।

जोड़ी बारागुला, थोरांगा भेजी ए।
जोड़ी बारागुला, थोरांगा भेजी ए।।

ज्योतिषी के निर्देशानुसार बर्गुल गांव वालों ने बर्गुल से एक जोड़ी यानी दो आदमियों को अपनी दैवी ढोलकी को वापस लाने के लिए थोरंग भेजा।

ग्रांयी थोरांगी ए, पूछणी लागी ए।
जोड़ी बारागुला, किजी कामे आयी ए।

उस जोड़ी ने तिनन वादी के थोरंग गांव पहुंचने पर गांव वाले उन से पूछने लगे कि हे! बर्गुल के युगल। आप दोनों यहां किस प्रयोजन के लिए आए हैं?

आपुणी ढोलोकी ए, फिरी कारी लोड़ी ए।
आपुणी ढोलोकी ए, फिरी कारी लोड़ी ए।।

वे दोनों कहने लगे - हे महानुभाव! हमें अपनी ढोलकी वापिस चाहिए। दैवी ढोलकी के प्रवास के कारण हमारे गांव में अकाल की सी स्थिति उत्पन्न हो गई है। अतः कृपया ढोलक हमें वापिस दीजिए।

आपुणी ढोलोकी ए, फिरी कारी आणे ए।
आधुना पाथे ओ, आपे आप बजाई ए।।

वह जोड़ी थोरंग गांव से अपनी ढोलकी वापिस लेकर आ रहे थे तो आधे रास्ते पहुंचकर वह ईश्वरीय ढोलकी अपने आप बजने लगी।

आपुणी ढोलोकी ए, बारागुला पहुंची ए।
ग्रांयी बारागुला, शिबे-शागूणा कीती ए।।

अपनी ढोलकी के बर्गुल पहुंचने पर बर्गुल गांव वाले बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने शुभ-शकुन के लिए ढोल की पूजा अर्चना की।

संगलाना सेरी ए, सालाना फेरी ए।
संगलाना सेरी ए, सालाना फेरी ए।।

ढोल के स्वग्राम पहुंचने से संगला परिवार के खेतों की फसल पुनः अच्छी होने लगी।

गवैया - मास्टर लाल चन्द शासनी, मनाली 1974

नोट - कहा जाता है कि उस ढोलकी की वापसी के लिए थोरंग वालों ने बर्गुल गांव से नौ लख अन्न वसूल किए थे। 20 दोण का एक लख अथवा गोद (लाहुली) होता है। दोण एक काष्ट के पात्र का नाम है। प्राचीन लाहुली समाज में अन्न के क्रय-विक्रय के समय अन्न मापने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। एक द्रोण 16 छटांग के बराबर होता था। लाहुल की पट्टनवादी में इसे 'रेन', गहरी बोली में 'ब्रे' तथा तोद-पा बोली में 'डे' कहते हैं।

उपर्युक्त लोकगीत की पंक्तियों से इस बात का पता नहीं चलता कि चर्चित ढोल पहले थोरंग गांव कब और कैसे पहुंचा। ढोल, ढोलक तथा ढोलकी प्रमाणित हिन्दी शब्दकोषों के अनुसार 'ढोल' उस वाद्य यंत्र को कहते हैं जिसके दोनों छोर चमड़े से मढ़े हुए होते हैं और उसे गले पर लटका कर बजाया जाता है। ढोलक और ढोलकी ढोल की अपेक्षा आकार में छोटी होती है। परन्तु हिमाचल प्रदेश की क्षेत्रीय बोलियों में ढोल, ढोलक तथा ढोलकी शब्द एक दूसरे के पर्यायवाची हैं।

द्रष्टव्य हिन्दी-हिमाचली (पहाड़ी) शब्दावली पृष्ठ 28

लेखक बन्धुओ,

जैसा कि आप को ज्ञात है लाहुल स्पीति की लोक कला, साहित्य व संस्कृति को सही रूप में सामने लाने व लुप्त होती लोक विधाओं को संरक्षित करने व पुनर्जीवित करने तथा आस-पास की अन्य हिमालयी संस्कृतियों के साथ तुलनात्मक विवेचना द्वारा आत्म परिष्कार आदि के उद्देश्यों को लेकर "चन्द्रताल" का प्रकाशन आरम्भ किया गया था। सभी लेखक बन्धुओं से आग्रह है कि अपने हर प्रकार के लेख व कोई भी साहित्यिक रचना "चन्द्रताल" में प्रकाशनार्थ भेज कर हमारे इस अनुष्ठान को आगे बढ़ाने में अपना सहयोग दें। हिमाचल के सभी लेखक बन्धुओं से निवेदन है कि वह अपने इलाके की संस्कृति से सम्बन्धित लेख "चन्द्रताल" के लिए भेज कर हमें प्रोत्साहित व अनुगृहीत करें। लेख भेजते समय कृपया इस बात का विशेष ध्यान रखें कि लिखाई साफ-साफ हो जिसे आसानी से पढ़ा जा सके, लिखते समय पंक्तियों के बीच डबल दूरी दें अर्थात् एक पंक्ति छोड़ कर लिखें तथा पन्ने के एक ही ओर लिखें क्योंकि दोनों ओर लिखे पन्ने मुद्रण प्रक्रिया में विघ्न पैदा करते हैं। "चन्द्रताल" के पृष्ठ हर प्रकार के लेखकों व पाठकों के लिए खुले हैं। हमारा आग्रह है कि आप लोग ज़रा भी न हिचकें। पाठकगण हमें अपनी प्रतिक्रिया से अवश्य अवगत कराते रहें।

-संपादक

शुद्धि संशोधन

1. चन्द्रताल के गत 15वें अंक में 'हमारी गौरवपूर्ण शिक्षा का प्रतीक, तक्षशिला विश्वविद्यालय' शीर्षक लेख में पृष्ठ 24 कालम 2 पर, 'आचार्य के परिवार और छात्र दो प्रकार के होते थे' की जगह 'आचार्य के परिवार और छात्र एक साथ रहते थे। छात्र दो प्रकार के होते थे।' पढ़ना चाहिए।
2. पृष्ठ 28 पर 'आर्य अवलोकितेश्वर का बीज मंत्र' की जगह 'धारणी-मंत्र' तथा 'ऐ पद्मासन में स्थित मणि (आर्य अवलोकितेश्वर) तेरी सिद्धि हो।' की जगह 'माला और पद्म धारी (बोधिसत्त्व आर्य अवलोकितेश्वर) को मैं प्रणाम करता हूं।' होना चाहिए।

-संपादक

संगोष्ठी का आयोजन

लायुल-पित्ती जन-कल्याण संगठन मनाली के सौजन्य से दिनांक 5 अगस्त, 1999 को मनाली में एक संगोष्ठी का आयोजन हुआ। निमंत्रण पत्र तो लगभग 150 महानुभावों को भेजे गए, लेकिन उन में से 25 ने पधार कर आयोजकों को कृतार्थ किया व उनका उत्साह बढ़ाया। उपस्थिति अधिक नहीं होने पर भी आयोजन को सफल मानना चाहिए क्योंकि इस प्रकार की संगोष्ठी आयोजित करने का यह प्रथम प्रयास था।

विषय इस प्रकार थे - (1) 21वीं शताब्दी में लाहुल-स्पीति की पहचान - ऐतिहासिक, सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश में। (2) बदलते मूल्यों के संदर्भ में 'जड़' से 'छूट' रही नई पीढ़ी। (3) जनजातीय समाज का संस्कृती-करण।

प्रबुद्ध वक्ता थे - आचार्य प्रेमसिंह जी, श्री छेरिंग दोर्जे जी व कर्नल प्रेम चन्द। तीनों ही वक्ताओं ने प्रथम विषय - '21वीं शताब्दी में.....' को ही चुना था। शेष दो विषय अत्यन्त गम्भीर सामाजिक समस्याओं से जुड़े थे। आशा है, भविष्य में आयोजित की जाने वाली संगोष्ठी में कोई न कोई प्रबुद्ध जन इन विषयों पर भी बोलेगा।

कर्नल प्रेम ने आज के हमारे समाज की दुःखती रग पर हाथ रखते हुए प्रश्न उठाया कि रोहतांग के इस पार रहते हुए अपनी पहचान बनाने के लिए हम 'मूल' में से कितना संजो कर रखें और कितना छोड़ दें? उन का कहना था कि परिवर्तन प्रकृति का नियम है परन्तु साथ ही उन का प्रश्न भी था कि क्या इस तथाकथित परिवर्तन को सही दिशा दिया जाना सम्भव नहीं?

आचार्य प्रेम सिंह जी तो लाहुल-स्पीति के समृद्ध संस्कृति की बात करते-करते भाव-विभोर हो उठे। उनके अनुसार हमारी संस्कृति से जुड़े कार्यकलापों में, चाहे वह विवाहोत्सव हो, मरण संस्कार हो अथवा तीज़-त्यौहार का समय हो, सभी अवसरों में प्रतीकों का उपयोग खुलकर हुआ है। प्रतीकों का सही अर्थ ढूंढ सकें तो वही हमारी पहचान बन सकते हैं। आचार्य जी ने एक बात और कही - वह यह कि किसी समय लाहुल-स्पीति वालों की पहचान उनके प्यार, सहयोग, सद्भावना व ईमानदारी जैसे गुणों के कारण होती थी। आज क्या हम इन प्रकृति दत्त गुणों को संजोकर रख पाए हैं?

'मैं कौन हूं?' यह जानने की जिज्ञासा सभी में होती है। शायद यही चाह श्री छेरिंग-दोर्जे जी की खोज की प्रेरणा है। उन्होंने रहस्योद्घाटन किया कि मध्य तिब्बत के 'बोन' धर्म के अनुयायी, 'जंग-जुंग' जाति के प्रमुख देवता का नाम 'धपन' हैं। इससे भी अधिक आश्चर्यचकित करने वाली बात उन्होंने बताई, वह यह कि 'जंग जुग' जाति जिस भाषा का प्रयोग बोल चाल अथवा लिखने में करती है, उसके असंख्य शब्द पट्टनी बोली के शब्दों से समानता रखती है। श्री दोर्जे जी प्रशंसा के पात्र हैं कि नई पीढ़ी को वह बहुत ही प्रेरणादायक विषय की ओर आकर्षित करना चाहते हैं। इस दिशा में खोज का दायरा कितना बड़ा हो सकता है, आप स्वयं समझ सकते हैं।

-ई॰ बीर सिंह कपूर, *मनाली*

हिमाचल-राईफल्ज़ की आवश्यकता क्यों?

पुरातन काल से आज तक शिव भूमि में बसने वालों ने अपने पराक्रम से रणभूमि को सींचा है। महाभारत में गधर्वो, किन्नरों व पाषाणियों से लेकर पहाड़ी रणबाकुरों ने द्वितीय विश्व युद्ध और भारत-चीन व भारत-पाक युद्ध तक में दुश्मनों की खाल उधेड़ी है। आज भी यह पहाड़ी तेंदूए जे.एण्ड.के. राइफल्ज़, राजपूत, डोगरा व गोरखा न जाने कितने रैजीमैन्टों में अपने खून से नई-2 कहानियों लिख रहे हैं। कौन सा आकाश है जो इन्होंने नहीं छुआ है। ऑपरेशन विजय में अमोल कालिया, विक्रम बत्रा, संजय कुमार द्वारा दुश्मनों की तबाही को अपने खून से लिखा, 1948 में कैप्टन भीम चन्द द्वारा लद्दाख में पाकिस्तानी घुसपैठियों का सफाया तथा ऐसे कितनी ही खून से सींची मंज़रे है जो इन पहाड़ी रणबांकुरों ने नहीं पाई। लेकिन फिर भी इनके नाम से आज भी कोई रेजीमैन्ट नहीं, अपनी ललकार के लिए उद्घोष नहीं।

आज हिमाचल वीर भूमि बन गया है लेकिन यहां के नवयुवकों को सेना में भर्ती के लिए काफी कम अवसर हैं। लाहुल-स्पिति के नव-युवकों को पहले लद्दाख स्काऊटस में भर्ती किया जाता था, जो कि सिर्फ 1988-89 में ही अमल में आया। इसके पश्चात सिर्फ लद्दाखियों को ही इस में भर्ती किया जाता है। इसके बावजूद 50 लाहुली जवानों में से 18 सूरमाओं ने ऑपरेशन विजय में सीधा भाग लिया। यह भी अजीब बिडम्बना है कि जिस स्थान से सम्बन्ध रखने वाले ऑफिसरों ने (के. पृथ्वी चन्द, मे. खुशाल चन्द व के. भीम चन्द) लद्दाख स्काऊट्स का गठन किया। वहीं के नवयुवक, उसमें भर्ती भी नहीं हो सकते। इसका एकमात्र उपाय है कि हिमाचल का अपना रेजीमैन्ट हो और अपना उद्घोष **''बोलो देवों के देव हर-हर महादेव''** इस जयकारी से जब वह दुश्मनों पर टूट पड़ेंगे तो कहर बरसा जाए और दुश्मन भागता हुआ नज़र आए। हिमाचल के वीरगति को प्राप्त वीर सैनिकों के लिए यही सबसे बड़ी श्रद्धाजंलि होगी कि उनके प्रदेश का भी एक रैजीमैन्ट हो जिसमें उनकी भागीदारी सुनिश्चत हो ताकि रण भूमि में दुश्मनों के खून से नई-नई गाथाएं लिखते रहे।

-बलदेव कृष्ण धरसंगी

लाहुल आलू सोसायटी

पिछले कुछ महीनों में लाहुल आलू सोसायटी पर राजनीतिकरण, अनियमितताओं का आरोप सुनने को मिला, उसके जवाब में प्रबन्धक मण्डल ने भी जवाबी गोले दागे। लेकिन इस आरोप-प्रत्यारोप के बीच में फिर असली मुद्दे कहीं खो गए। वास्तव में यह एल.पी.एस. है क्या? क्या यह एक जीवित व्यक्ति है जिसे हर कोई, कोसना अपना अधिकार समझता है, या फिर, कोई निजी कम्पनी है जो कि सिर्फ अपने हितों को ही महत्त्व देती है। तो जनाब, एल.पी.एस. न ही निजी कम्पनी है और न ही कोई व्यक्ति विशेष। तो फिर यह है क्या बला? एल.पी.एस. एक सहकारी सभा है जो कि हिमाचल प्रदेश सहकारी सभाएं के अन्तर्गत पंजीकृत है तथा अपने सदस्यों, जिनकी संख्या लगभग 1800 है तथा जिनमें 1450 सदस्य एक्टिव हैं; के हित में कार्य करती है। इस सभा की क्या नीति होनी चाहिए? किस क्षेत्र में कार्य करना है? इन सबका नीतिगत फ़ैसला सदस्यगण आम सभा के द्वारा तय करते हैं। इस वक्त यह सभा भारत वर्ष के उन गिने-चुने प्राथमिक सहकारी सभाओं में एक, है जो कार्य प्रणाली व पारदर्शिता के लिए अपना स्थान रखती है। तो क्या कारण है कि जब तब इस संस्था पर प्रहार होता रहता है? जहां तक इसके राजनीतिकरण का सवाल है, इस संस्था के प्रबन्धक मण्डल में राजनीतिज्ञ तो हैं लेकिन संस्था का राजनीतिकरण अभी तक नहीं हुआ है, यह तो तय है। लेकिन, निकट भविष्य में ऐसा न हो यह सुनिश्चित करना सभा के सदस्यों का कर्त्तव्य रहेगा। इसी प्रकार जहां अनियमितताओं का सवाल है, यह मसला सदस्यों की अधिकाधिक भागीदारी से ही सुलझाया जा सकता है। आज आम सदस्य, सभा की आम सभा में न के बराबर उपस्थित होते हैं और ज़्यादातर सदस्य सहकारी सभाओं की कार्यप्रणाली से अनभिज्ञ होते हैं। इस प्रकार जब अधूरा ज्ञान होगा और उनकी भागीदारी भी नहीं रहेगी तो अनियमितताएं बढ़ेंगी ही। जबकि यह बात अलग है कि सभा में अनियमितताएं हैं कि नहीं। यहां सदस्यों की भागीदारी से यह मतलब है कि वह सबसे पहले यह समझें कि वह जिस संस्था के सदस्य हैं वह किन नियमों व अधिनियमों के तहत काम करती है। जब वह यह जान लेंगे कि सभा में उनकी व सभा की एक दूसरे के प्रति क्या कर्त्तव्य व अधिकार है; तब वह सही तौर पर सवाल जवाब कर सकते हैं। जैसे कि सभा सदस्य का कर्त्तव्य है कि वह अच्छा बीज आलू तैयार करने के लिए सभा द्वारा स्थापित मानकों को माने। उसी प्रकार उसका यह अधिकार है कि वह अपने उत्पादन का सही मूल्य हेतु सभा से उच्च कोटि के व्यवस्था की अपेक्षा करें। जिस प्रकार वह सारा उत्पादन विपणन के लिए सभा को देने के कर्त्तव्य से प्रतिबद्ध है, वहीं वह अधिकार रखता है कि वह सही रख-रखाव व उचित मूल्य की मांग करे। आम सभा जहां, सभा के आदर्श उपविधियों में संशोधन आदि के लिए उत्तरदायी है, वहीं पूरे साल का लेखा-जोखा व अन्य सूचनाएं उपलब्ध करवाने के लिए सभा का प्रबन्धक मण्डल व अधिकारी सदस्यों के प्रति जवाब देह होते हैं। इस आम सभा में सभा सदस्यों की उपस्थिति व उनके द्वारा विचार व्यक्त करने से ही अर्थपूर्ण भागीदारी सुनिश्चित होगी तथा संस्था निरन्तर प्रगति करेगी।

जहां तक एल.पी.एस. की एक संस्था के रूप में कार्यप्रणाली है, उसमें सुधार की अभी भी बहुत गुंजाईश है। खासकर वित्तीय प्रबन्धन अभी भी पुराने ढर्रे पर चल रही है, जिससे सभा को एक सही वित्तीय दिशा निर्देश नहीं मिल पाता। सभा की बैड डैब्ट (डूबे हुए कर्ज़े) की बढ़ती हुई दर इस ओर इशारा करती है। सभा को अपने सदस्यों की सहूलियत के लिए कुछ ऐसे कार्य भी करने पड़ते हैं जोकि आर्थिक तौर पर अलाभकारी होते हैं। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि वित्तीय प्रबन्धन की ओर ध्यान न दिया जाए।

जहां सभा फल व सब्जी प्रोजेक्ट, फल विधायन में मन्द गति पकड़े है, वहीं यह नितान्त आवश्यक हो जाता है कि लाहुल की वर्तमान जलवायु, सयुंक्त परिवार में विघटन, रसायनिक खाद व कीट नाशकों का अधिकाधिक प्रयोग व पैदावार की घटती दर को देखते हुए भविष्य में सभा अपने सदस्यों के हितों की कैसे रक्षा करेगी? इस विषय को आने वाली आम सभा में एजेण्डा के तौर पर अभी से विभिन्न चैनलों से बहस का मुद्दा बनाया जाना चाहिए। यह आवश्यक हो गया है कि लाहुल की कृषि नीति को नए सिरे से तय किया जाए तथा ऐसी नकदी फसलों को उत्पादन के लिए पेश किया जाए जो कम मज़दूरी की मांग करें और पर्यावरण हितैषी गुणवत्ता भी रखती हो, तभी वह लाभकारी सिद्ध होगी। इसका हल तभी सामने आएगा जब इस विषय को विभिन्न सरकारी व गैर सरकारी व निजी संस्थाओं में बहस के लिए रखा जाए। एल.पी.एस. इसका निवारण, अपना अनुसंधान व विकास प्रकोष्ठ बनाकर कर सकता है। पाईलेट स्तर पर विभिन्न फसलों को उगाकर उनकी व्यवहारिकता देखते हुए खोजबीन करते रहना पड़ेगा। अगर एल.पी.एस. अग्रणी सहकारी सभा के नाते 21वीं सदी की चुनौतियों का सामना करना चाहता है तो उसे दूरदर्शिता और कर्मठता को अपनाना होगा तथा सभा सदस्यों को भी व्यर्थ आरोप लगाने की अपेक्षा अपनी अधिकाधिक भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी, क्योंकि इस सभा का कोई अलग व्यक्तित्व नहीं है अपितु आपके व्यक्तित्व का ही यह एक प्रतिविम्ब है।

-बलदेव कृष्ण धरसंगी

करगिल युद्ध - एक लाहुली की दृष्टि में

- छेरिंग दोर्जे

मई मास के प्रथम सप्ताह में दरास और करगिल (जम्मू कश्मीर प्रान्त का लद्दाख खण्ड) की निम्न घाटियों में से शीतकालीन बर्फ के पिघलने के पश्चात, वसंत ऋतु की आगमन पर वहां के निवासी पूरी तरह से अपने खेती-बाड़ी के कार्य में जुट चुके थे। परन्तु ऊंचाई पर स्थित ढलानों में बने खेतों से, जिसे दोफरी भी कहते हैं (स्थानीय भाषा में 'डोगसा'), पर से बर्फ पूरी तरह नहीं पिघला था। फिर भी कुछ लोग अपने खेतों को जुलाई-पूर्व सफाई और तैयारी में लगे थे। अब लोगों ने अपने-अपने भेड़-बकरियों और पशुओं (याक और ज़ो-ज़ोमो आदि) को ऊंचाइयों की चरागाहों में नए उगे हरी-हरी घास चरने के लिए बाहर निकलना आरम्भ कर दिया था। शीतकाल की लम्बी और ठिठुरन भरी दिनों में यहां पर पशुओं को भी कमरे के भीतर बंद कर सूखा चारा खिलाया जाता है।

6 मई, 1999 को इन पशु चरवाहों ने कुछ अजनबी लोगों को बर्फीले ढलानों में संदिग्ध हालात में विचरते देखा और उन्होंने तुरन्त इस समाचार भारतीय सेना चौकियों में जाकर दी। 7 मई को इन संदिग्ध लोगों की खोज में गए हमारे सैनिकों पर गोली चलाई गई। 8 मई को यह घुसपैठिए पाकिस्तानी सेना के जवान होने की पुष्टि हो गई। यह लोग भारतीय सीमा के भीतर अर्थात नियन्त्रण रेखा के भीतर 5 से 7 कि.मी. तक घुस आए थे। उनके पास पाकिस्तान द्वारा दिए गए मशीनगन, मोर्टार और अन्य संवेदनशील शस्त्र थे। उनके पास सेना के तोपखाने की सहायता, बर्फ में चलने के लिए स्नो मोबाइल और हेलीकाप्टर की सहायता भी उपलब्ध थी। अफ़गानिस्तान के गृहयुद्ध में अमरीका द्वारा अफ़गानी तालिबान को दी गई भूमि से हवा में मार करने वाली स्टिंगर मिज़ाइलें भी उनके पास थीं।

इसके तुरन्त पश्चात समूचे नियंत्रण रेखा के साथ-साथ द्रास, करगिल, मशकोह, तुर्तुक और सियाचिन के क्षेत्रों में घुस आए पाकिस्तान सेनाओं और विदेशी भाड़े के घुसपैठियों का वीर भारतीय सेनाओं के साथ युद्ध छिड़ गया। फलस्वरूप दो महीनों के सशस्त्र युद्ध के पश्चात वीर भाररतीय सेवाओं ने अपनी मातृ भूमि का एक-एक इंच भूमि पाकिस्तान से छुड़ा लिया। पाकिस्तानी विदेश मंत्री हाय-तौबा मचाते हुए कभी चीन और कभी अमेरिका भागता फिर रहा था। पाकिस्तानी सेनाओं को नियंत्रण रेखा के पार भगा कर ही भारतीय जवानों ने दम लिया। परन्तु इसका मूल्य रक्त से ही चुकाया गया। ऐसा लगता है कि पाकिस्तानी अधिकारियों ने भारतीय सेनाओं की क्षमता को गलत रूप से आंका था। विश्व की सबसे ऊंचे पहाड़ों पर वह अपने को अजय मानने की गलती कर बैठे। हमारी सरकार की दृढ़ता और सैनिकों की वीरता ने उनके मनसूबों को धूल में मिला दिया।

स्वतंत्रता के पश्चात कश्मीर की घटनाओं पर दृष्टि

जम्मू कश्मीर के तत्कालीन महाराजा हरिसिंह ने 24 अक्तूबर, 1947 को अपने राज्य का भारत गणराज्य के साथ विलय का प्रस्ताव भेजा। और इस पर 26 अक्तूबर को महाराजा के हस्ताक्षर हुए। अगले दिन 27 अक्तूबर को जम्मू कश्मीर राज्य का भारत के साथ विलय पूर्णरूप से हो गया।

22 अक्तूबर, 1947 को जम्मू कश्मीर के सीमावर्ती नगर मुज़फ़्फ़राबाद पर पाकिस्तान समर्थित कबाइली लश्करों ने हमला बोल दिया। यह कबाइली लश्कर, जिनकी संख्या 20 हज़ार बताई गई है, पाकिस्तान की सरकार ने विशेष रूप से जनरल अकबर खान के नेतृत्व में खड़ी की थी। मुज़फ़्फ़राबाद पर कब्ज़ा जमाने के पश्चात यह कबाइली सेना आगे बढ़ते श्रीनगर पर कब्ज़ा करने चले।

27 अक्तूबर को भारतीय सेना श्रीनगर की हवाई पट्टी पर उतरे और कश्मीर में घुस आए पाकिस्तानी कबाइलियों को पीछे धकेलना आरम्भ कर दिया। यह कहा जाता है कि उस समय के भारतीय सेना के कार्यवाहक अंग्रेज़ थल सेनाध्यक्ष जनरल बुशर का संदेश था कि केवल श्रीनगर और जेहलम घाटी की ही रक्षा करना। जेहलम घाटी से प्रायः आक्रमणकारियों का सफाया शीघ्र ही कर लिया गया। इसके अतिरिक्त जम्मू डिविज़न में भी भारतीय सेनाओं ने उड़ी, पूंछ, राजौरी, नौशहरा आदि को फिर से अपने नियंत्रण में कर लिया। इसके लिए जम्मू कश्मीर डिविज़न के कमान संभाल रहे जनरल कुलवंत सिंह ने परिस्थितियों पर विचार कर 16 नवम्बर, 1947 को नौशहरा, झंगड़, कोटली, मीरपुर और पूंछ में सहायता के आदेश दिए।

परन्तु जम्मू कश्मीर का समूचा उत्तर-पूर्वी और उत्तर-पश्चिमी भूभाग, जिसे लद्दाख, बल्तिस्तान और गिलगित एजेंसी कहा जाता है (ऊपरी सिंधू उपत्याका

और उसकी सहायक नदियों की उपत्यकाएं), बिना विशेष सैनिक बल के अरक्षित पड़ी थीं। यह समस्त भू भाग संसार की सबसे ऊंचाई पर स्थित तिब्बत की पठार (संसार की छत) से लगती है और भौगोलिक दृष्टि से तिब्बती पठार का ही भाग माना जाता है।

इधर श्रीनगर आने वाले समाचारों से पता लग रहा था कि गिलगित स्काउट्स, जिसकी कमान एक अंग्रेज़ मेजर डब्ल्यू.डी.ब्राऊन कर रहा था, ने 31 अक्तूबर, 1947 को स्काउट्स में एक लघु बगावत के पश्चात पाकिस्तान को सौप दिया था। इस प्रकार गिलगित और अन्य एजेंसियों (पुनीयाल, होंज़ा आदि) पर स्वत: ही पाकिस्तान का कब्ज़ा हो गया। अब गिलगित स्काउट्स और कुछ कबाइली टुकड़ी, जिनकी संख्या 6 हज़ार से अधिक थी, बल्तिस्तान और लद्दाख पर कब्ज़ा जमाने की गर्ज़ से पूर्व दिशा की और बढ़ते जा रहे थे।

शीतकाल के आगमन से श्रीनगर-लेह मार्ग (उस समय खच्चर मार्ग) पर पड़ने वाला दर्रा ज़ोजिला (उं. 3529 मीटर) बर्फ की मोटी तहों के अंदर ढका मार्ग अवरुद्ध किए था। अब करगिल और लेह पहुंचने वाली एकमात्र मार्ग बंद चुका था। आगामी अप्रैल मास तक क्या पता बल्तिस्तान होते कबाइली सेना लेह और करगिल न पहुंच जाएंगे। श्रीनगर में सेना मुख्यालय में इन बातों को सोचकर जनरल करियप्पा बेचैन हो गए।

मेजर पृथी चन्द (अब सेवानिवृत कर्नल) जो उस समय श्रीनगर में ही थे, ने ज़ोजिला दर्रा पार कर लेह जाने के लिए अपने ब्रिगेड अफसर से आज्ञा मांगी। कुछ विचार विमर्श के पश्चात यह तय किया गया कि मेजर पृथी चन्द के साथ 15 सैनिक और कुछ भारवाहक को साथ भेजकर लेह में वालंटीयर फोर्स तैयार कर लद्दाख और करगिल को बचाने का यत्न किया जाना चाहिए। मेजर पृथी चन्द लद्दाख के पड़ोसी इलाका लाहुल के संभ्रान्त ठाकुर कुल में पैदा हुए हैं। उनके पिता कैप्टन रायबहादुर अमर चन्द प्रथम महायुद्ध में इराक़ में लड़े थे।

15 फरवरी, 1948 को मेजर पृथी चन्द और उनके साथ 15 सेना के नौजवान, जिनमें अधिक लोग लाहुल के ही थे। उनके चचेरा भाई मेजर खुशाल चन्द और रिश्ते के चाचा सूबेदार भीम चन्द भी शामिल थे। यह बहुत छोटी सी सेना की टुकड़ी श्रीनगर से लेह की और चल पड़ी। इनके साथ 50 भारवाहक भी थे। इस टुकड़ी ने बर्फ से ढके ज़ोजिला को गिरती बर्फ के मध्य 26 फरवरी, 1948 करगिल पहुंचे। उस समय लेह में लद्दाख की रक्षा के नाम पर रियास्ती सरकार के 30 से कम जवान रह गए थे। यहां पहुंच कर मेजर पृथी चन्द बिना समय खोए लद्दाख के नौजवानों का एक वालंटीयर बल खड़ा किया। उन्होंने चंद दिनों की ट्रेनिंग के पश्चात दुश्मनों के साथ लोहा लेने युद्धरत स्थानों में भेज दिया गया। आज यही फोर्स पहाड़ी लड़ाई में निपुण विश्वविख्यात 'लद्दाख स्काउट्स' के नाम से जाना जाता है। स्वर्गीय कर्नल छेवांग रिनचेन जैसे वीर योद्धा इसी स्काउट्स की देन हैं। उन्हें दो बार महावीर चक्र तथा सेना मेडल से सुशोभित किया गया है।

गिलगित स्काउट्स की गद्दारी के पश्चात यह लोग कबाइली सेना के साथ मिलकर बल्तिस्तान पर आक्रमण करने आगे चले। उस समय बल्तिस्तान के मुख्यालय स्कर्दू के महत्वपूर्ण किला पर कर्नल शेरजंग थापा के नेतृत्व में केवल 75 भारतीय जवान ही थे जिन्होंने वहां 24 नवम्बर, 1947 से मोर्चा सम्भाल रखा था। फरवरी से अप्रैल 1948 के मध्य पाकिस्तानी सेनाओं ने स्कर्दू पर कई बार हमले किए। आगे बढ़ती पाकिस्तानी सेनाओं ने 10 मई को करगिल पर हमला कर के कब्ज़ा कर लिया और 6 जून, 1948 को द्रास पर भी दुश्मनों का कब्ज़ा हो गया। अब ज़ोजिला दर्रा की उस पार श्रीनगर-लेह मार्ग पर पूर्ण रूप से पाकिस्तानियों के कब्ज़े में हो चुका था। लेह पहुंचने के लिए केवल 20 कि.मी. की दूरी ही रह गई थी। अंत में 14 अगस्त, 1948 को स्कर्दू का किला भी दुश्मनों के हाथ चला गया। दुश्मन की एक अन्य टुकड़ी ने सूरू घाटी के मार्ग से पंचे जोत पार ज़ंस्कर को भी कब्जा में ले लिया था।

भीतरी हिमालय के ऊंचे पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य बसा लाहुल घाटी अतीत काल से धार्मिक और समाजिक रूप से लद्दाख और ज़ंस्कर के बहुत निकट रहा है। अपने पड़ोस के इलाकों में पाकिस्तानी सेनाओं के पहुंचने की समाचारों ने उन्हें चिन्ता में डुबो दिया। समस्त लाहुल वासियों की तरह तीन-चार बैठकें की गई गई और यह निर्णय लिया गया कि दिल्ली जाकर सरकार को मनाली-लेह खच्चर मार्ग द्वारा भारतीय सेनाएं लेह भागी जाएं। इस मार्ग द्वारा अतीत काल से पश्चिमी तिब्बत और लद्दाख के मध्य लाहुल वाले

व्यापार करते रहे है। लाहुल के दो नवयुवक नेता ठाकुर देवी सिंह और ठाकुर शिव चन्द दिल्ली जाकर तत्कालीन प्रधान मंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू जी से मिले और उन्हें मनाली-लेह मार्ग का पूर्ण ब्यौरा दिया। प्रधानमंत्री जी ने उन्हें रक्षा मंत्रालय के अधिकारियों से मिलाया और यह निर्णय लिया गया कि तुरन्त पहली सेना की टुकड़ी श्री देवी सिंह के साथ इस मार्ग द्वारा लेह भेजा जाए। सेनाओं की रसद और युद्ध सामग्री को कुल्लू के लोगों ने लाहुल तक अपनी पीठ पर पहुंचाया, फिर वहां से लद्दाख तक लाहुल वासियों ने अपने खच्चरों और घोड़ों पर लेह और नुबरा पहुंचाया। जब पहली सेना लेह पहुंची तो उस समय लद्दाख के निम्न भागों और नुबरा घाटी पर पाकिस्तानी सेनाओं ने कब्ज़ा कर रखा था। मेजर खुशाल चन्द मुट्ठी भर जवानों और लद्दाखी वालंटीयर्स के साथ निमू के आस-पास दुश्मन को आगे बढ़ने से रोक रहे थे। सूबेदार भीम चन्द नुबरा घाटी में केवल लद्दाखी वालंटीयर्स के साथ पाकिस्तानियों को पीछे धकेलने में जुटे थे। मनाली-लेह मार्ग से सेना की सहायता पहुंचते ही लद्दाख के युद्ध का पांसा पलट गया। पाकिस्तानी सेनाओं को पीछे हटने के और कोई मार्ग नहीं मिल रहा था। जब भारतीय सेनाएं लेह पहुंची तो पहाड़ी मार्ग द्वारा आने के कारण सांस फूलने आदि की तकलीफें उन्हें नहीं हुईं। सेनाओं का इस मार्ग द्वारा लेह जाने का सिलसिला सितम्बर मास तक जारी रहा। लाहुल वालों ने घोड़ों को नियमित रूप से लेह तक जाने के लिए एक कमेटी का गठन किया जिसकी अगुआई टशी दावा ठोलंग निवासी ने की। टशी दावा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रथम लाहुली सदस्य हैं। इसके पश्चात उन्होंने संघ का कार्य तीन वर्ष तक लेह में किया। वहां वह एक छोटी सी दुकान के बहाने संघ का प्रचार करते थे।

१९४८ में करगिल क्षेत्र

दूसरी तरफ ज़ोजिला दर्रा में जनरल थिमय्या ने 1 नवम्बर, 1948 को टैंक पहुंचा कर दुश्मन का सफाया करना आरम्भ कर दिया था। 2 नवम्बर को टैंक द्रास मार्ग से मत्याना पहुंचे और 24 नवम्बर को करगिल से दुश्मनों का सफाया कर दिया गया। श्रीनगर-लेह मार्ग पर दोबारा भारतीय सेनाओं का कब्ज़ा हो गया। अब भारतीय सेनाएं बल्तिस्तान और गिलगित एजेंसी की और बढ़ रहीं थीं कि 31 दिसम्बर, 1948 को युद्ध विराम की घोषणा होने से हमारे वीर सेनाओं के कदमों को आगे बढ़ने से रोक दिया।

लद्दाख को बचाने के लिए लेह हवाई अड्डा, जिसे एक स्थानीय इंजीनियर सोनम नोरबू की देख-रेख में थोड़े समय के भीतर तैयार कर लिया था, महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस नई हवाई पट्टी पर प्रथम बार एयर कमोडोर मेहर सिंह ने 24 मई, 1948 अपना विमान उतारा था।

लाहुल के चन्द सेवानिवृत्त सैनिक कैप्टन प्रताप चन्द (सेवानिवृत्त) की अध्यक्षता में ज़ंस्कर से पाकिस्तानी सेनाओं को भगाने के लिए अगस्त 1948 में गए थे। परन्तु पाकिस्तानियों पास नए प्रकार के शस्त्र होने के कारण भगाने में सफलता नहीं मिली। फिर भी उनको पदुम से आगे आने में रुकावटें खड़ी कर दीं।

मनाली-लेह मार्ग का महत्व सुरक्षा की दृष्टि से

मनाली-लेह मार्ग भारत के उत्तर पश्चिमी सीमाओं की रक्षा के लिए कितनी महत्व रखती है, इसका अंदाज़ा आप लोग लगा चुके होंगे। सैन्य दृष्टि से लद्दाख का इलाका अति संवेदनशील है। श्रीनगर-लेह

राष्ट्रीय मार्ग कितना सुरक्षित है, इसका भी अंदाज़ा आज लग चुका है। लाहुल वासियों की और से पिछले 20-25 वर्षों से रोहतांग जोत (ऊंचाई 4010 मीटर) पर एक सुरंग खोद कर लद्दाख क्षेत्र को बारामासी यातायात की सुविधा उपलब्ध करने की बात भारत सरकार से कई बार की गई है। परन्तु दिल्ली स्थित अधिकारियों के मन में इस सुरंग की उपयोगिता और सैन्य सुरक्षा के लिए महत्व की बात भली प्रकार से समझ में नहीं आई है। गत अक्तूबर मास में श्री टशी दावा, प्रधान 'लाहुल-स्पीति और पांगी जनजातीय विकास समिति' की अध्यक्षता में एक तीन सदस्य प्रतिनिधि दल भारत के प्रधान मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी से उनके निवास पर मिलकर 'रोहतांग सुरंग' को शीघ्र बनाने हेतु प्रार्थना की थी। उनकी ओर से आश्वासन भरा उत्तर मिलने पर अब आशा की जा सकती है कि इस सुरंग पर शीघ्र कार्य आरम्भ हो जाएगा। प्रधानमंत्री जी का उत्तर था, 'इस सुरंग को कई वर्षों पहले तैयार हो जाना चाहिए था।' इस बात में संतुष्ट होकर प्रतिनिधि दल के सदस्यों ने प्रधानमंत्री जी का धन्यवाद किया।

मैंने कुछ लोगों को यह कहते हुए सुना है कि 'रोहतांग जोत सुरंग' ही लद्दाख की सुरक्षा के लिए काफी नहीं है। उससे आगे भी तीन जोतों को सुरंग द्वारा पार करने पर ही लद्दाख के लिए बारामासी यातायात खुला रह सकेगा। कुछ समाचार पत्रों में भी ऐसे लेख लिखे हैं। परन्तु यह बात नहीं है। रोहतांग के पश्चात बारालाचा-ला (ऊंचाई 5200 मीटर) पर सुरंग खोदने से यह काम चल जाएगा। आगे योनम और छारन नदी के साथ-साथ ज़ंस्कर घाटी होते हुए लद्दाख में निमू के स्थान पर श्रीनगर-लेह मार्ग से मिल जाएगा। यह मार्ग बहुत ही सुरक्षित होगा और ज़ंस्कर जैसे पिछड़े क्षेत्र के लिए विकास का मार्ग खुल जाएगा। केवल दो जोतों पर ही सुरंग बनाने की आवश्यकता है। ज़ंस्कर में भी मोटर वाहन की सड़क बन रही है। केवल 60-70 कि.मी. नई सड़क बनवाने की आवश्यकता होगी। वर्तमान करगिल संघर्ष और अंतर्राष्ट्रीय इस्लामिक जेहाद के चलते हमारी मातृभूमि की उत्तर-पश्चिमी सीमाओं की सुरक्षा हेतु मनाली-लेह मार्ग ही एकमात्र सुरक्षा की गारंटी है। करगिल युद्ध के भारतीय वीर शहीद सैनिकों को श्रद्धांजलि पेश करता हूं।

लाहुल-स्पीति लोक कला, साहित्य, संस्कृति संरक्षण फण्ड

जैसा कि सभी को विदित है कि "स्वंगला एरतोग", लाहुल स्पीति की कला, साहित्य व संस्कृति के उत्थान हेतु एक रजिस्टर्ड सोसाईटी है। जो सोसाईटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट, 21, 1860 के अन्तर्गत रजि० संख्या ल स/42/93 ज़िला मुख्यालय केलंग में पंजीकृत है। आप सभी जानते हैं कि ये लाभ रहित व स्वैच्छिक संस्था है और लाहुल स्पीति की लुप्त हो रही लोक कला, साहित्य व संस्कृति के संरक्षण और उसे पुनर्जीवित करने में लगी है, इस पुनीत कार्य में समाज के सभी लोगों से निवेदन है कि यथाशक्ति अपना योगदान दें। हर अंक में हम लाहुल स्पीति लोक कला, साहित्य व संस्कृति संरक्षण फण्ड के तहत सभी दानी सज्जनों का नाम, दान और जमा खर्चे का लेखा जोखा देते हैं।

क्र०	नाम	राशि
1.	डा. जय प्रकाश नारायण, वर्ल्ड हैल्थ ऑरगेनाईज़ेशन, नई दिल्ली	1,500.00
2.	श्री एन.जी. बोध कनिष्ठ अभियन्ता, केलंग, लाहुल	500.00
3.	पूर्व एकत्र	4,800.00
	कुल योग	**6,800.00**

अध्यक्ष, फण्ड कमेटी,
लाहुल स्पीति लोक कला,
साहित्य व संस्कृति संरक्षण फण्ड,
पोस्ट बॉक्स नं० 25,
मुख्य डाक घर, ढालपुर,
कुल्लू 175 101

जम्मू कश्मीर वर्तमान भौगोलिक स्थिति

समूचा क्षेत्र	=	2,22,236 वर्ग कि.मी.
पाकिस्तान के कब्ज़े में	=	78,114 वर्ग कि.मी.
चीन के कब्ज़े में	=	37,555 वर्ग कि.मी.
पाकिस्तान द्वारा चीन को अवैध रूप से दिया क्षेत्र	=	5,180 वर्ग कि.मी.
भारत में शेष	=	1,01,387 वर्ग कि.मी.

लद्दाख मिशन 1948

सन् 1946-47 में दो डोगरा, हमारा यूनिट पाकिस्तान में पंजाब में अन्दरूनी सुरक्षा में तैनात था। हिन्दुस्तान पाकिस्तान का झगड़ा था, और बंटवारा हुआ। हज़ारों हिन्दू-सिक्खों को मारते देखा, मंदिर लूटते देखा। उसके बाद हम लोग 29 अगस्त को पाकिस्तान छोड़ के हिन्दुस्तान आ गए। आने के बाद एक दम हवाई जहाज़ से हमें कश्मीर भेज दिया गया। 1 सिक्ख, 1 डोगरा और 2 डोगरा रेजीमैंट श्रीनगर गए और वहां जाकर दुश्मनों को खदेड़ते-खदेड़ते बारामूला तक पहुंचाया।

कर्नल पृथी चन्द

एक दिन उधर मेरा दोस्त सोनम नोरबु, इंजीनियर, लद्दाख का था, वह मिला। वह मेरा क्लास फैलो (=सहपाठी) था। मैंने कहा क्या हाल है। मिसेज़ (=श्रीमती) कैसी है? उसने कहा मिसेज़ को लद्दाख भेज दिया है। मैंने कहा क्यों? बोले कि पाकिस्तानी हमले की वजह से। यहां तो पाकिस्तानियों ने हिन्दू-मुसलमान किसी को नहीं छोड़ा। इसलिए मैंने उधर भेज दिया था, लेकिन अब लद्दाख से खबर आई है कि सब लोग पैकिंग कर रहे हैं अपना सामान, मन्दिर-मोनेस्ट्री (=गोम्पा), बड़े-बड़े अमीर लोग तिब्बत की ओर भागने की कोशिश कर रहे हैं और वहां सिक्योरिटी (=सुरक्षा) का बन्दोबस्त कुछ भी नहीं है। तो मेरा दिल बहुत बेचैन हो गया और लद्दाख के जो जवान थे, वे तो रोने लग पड़े। कहने लगे, हमारे जाने तक परिवार वालों के साथ पता नहीं क्या-क्या जुल्म करेंगे। फिर मैंने कोशिश की। मैंने अपने कर्नल को कहा कि हम और लद्दाख के तेरह-चौदह आदमी हैं, हमें लद्दाख भेजो, हमने लड़ना तो है ही यहां हो, चाहे वहां। उन्होंने कहा कैसे भेज दें, इतना दूर, ढाई सौ मील दूर? मैं नहीं भेज सकता। ब्रिगेडियर सेन को कहा। बोला, हम नहीं भेज सकते। तब मैंने लद्दाख को तार दिया कि हमने मिलिट्री की ओर से कोशिश किया, वह कामयाब नहीं हुआ, अब आप पं. नेहरू को तार भेजो। उन्होंने पं. नेहरू को तार भेजा कि हम लोग तीर-कमान, ढाल-तलवार ले कर अपने देश की रक्षा करेंगे, आप हिन्दुस्तानी फौज भेजो। तब पं. नेहरू ने महसूस किया कि लद्दाख कितना एहम जगह है, एक तरफ चीन, एक तरफ रशिया, एक तरफ अफगानिस्तान, एक तरफ पाकिस्तान। उन्होंने फोरन ऑर्डर (=आदेश) दिया आर्मी (=सेना) को। ऑर्डर होते-होते श्रीनगर पहुंचा। ब्रिगेडियर साहब ने हुक्म दिया, सर्दियों के दिसम्बर-जनवरी के दिन थे, कि तुम ज़िम्मेदार हो लद्दाख के लिए। ज़ोजीला बन्द है, सब दुनिया बन्द है, बर्फ पड़ रही है, कैसे भेज सकता हूं? फिर हमने कहा कि किसी भी सूरत में हम जाना चाहते हैं। हमें बड़ा दुःख है कि हमारे वहां के लोग और वहां के बड़े-बड़े गोम्पा-मन्दिर बिना सुरक्षा के रह गए हैं। तो उन्होंने कहा कि अगर तुम लोग वालण्टीयर होकर जाते हो तो हम भेज सकते हैं लेकिन हम फुल फौज नही भेज सकते । तब हम ने खुद वालंटीयर किया। तेरह आदमी थे हम। मेरे इलावा थे - मेजर खुशहाल चन्द, सुबेदार भीम चन्द, नायक नवङ मिन्डोल, लॉस नायक कर्म सिंह, सिपाही फुन्चोग, सिपाही सोनम अंगरूप, सिपाही तोबगे राम (लाहुल के) सिपाही सोनम। सिपाही लोबज़ङ, सिपाही टशी छेरिङ, सिपाही टशी ज़ंस्कर (लद्दाखी) सिपाही बहादुर सिंह, (किन्नौरी) सिपाही दलीप सिंह और सिपाही पटवारी मल (कांगड़ा से) ये दोनों हमारे साथ सिगनल वाले थे। और मिस्टर सोनम नोरबू, इन्जीनीयर हमारे साथ थे।

इन सब को साथ ले कर चल पड़े हम। हमारे पास कोई स्नोः क्लोदिंग (=बर्फ में पहनने वाले कपड़े) नहीं था। हमने भेड़ की खाल का बास्कट,

एक-एक टोपी, एक-एक जोड़ी दस्ताना बनवाया और चल पड़े। हमारे पास अपने-अपने हथियार के इलावा पचास राईफल और कुछ एमनीशन (=गोली बारूद) था और एक रेडियो सेट न. 22 था। उसके बाद पैदल ही हम गुण्ड पहुंचे। गुण्ड में आठ दिन तक बर्फ की वजह से पड़े रहे। फिर पहुंचे हम सोनमर्ग में। वहां ब्रिगेडियर फकीर सिंह स्टैट फोर्सेज़ का एक/दो कम्पनी ले के बैठे हुए थे, करगिल जा के स्कर्दो की मदद करने के लिए। उन्होंने बताया कि बर्फ पड़ी हुई है इसलिए आगे नहीं जा सकते हैं। अभी दो महीना ज़ोजीला नहीं खुलेगा। कौन बोलता है? बोला हमारे पास एक हबीब लोन है, एक्सपर्ट (=विशेषज्ञ) है वह पहाड़ में चढ़ने का, वह बोलता है। मैनें कहा कि हम बताएंगे, उसको बुलाओ। हबीब लोन को पूछा मैने, तुम वह एक्सपर्ट हो जो ब्रिगेडियर साहब को सलाह देता है। कहता है, हां। मैं नंगा पहाड़ पर चढ़ा हूं। फलां पहाड़ पर चढ़ा हूं। मैंने कहा तुम गर्मी में चढ़े हैं कि सर्दी में? कहता है, गर्मी में चढ़ा, सर्दी में कौन चढ़ सकता है। मैंने कहा अगर तुम गर्मी का एक्सपर्ट है तो हम सर्दी के। हम लाहुल के हैं और रटांग पास जो 13,400 फुट ऊंचा है, हम सर्दियों में भी क्रॉस करते हैं। तो ब्रिगेडियर साहब को कहा, हम जा रहे हैं इसको साथ भेजो, मैं बताऊंगा कि ज़ोजिला कैसे क्रॉस करते हैं। उसको हम साथ ले गए। बालतल में पहुंचे, बालतल में बड़ी भारी बर्फ पड़ रही थी। बड़ी मुश्किल से हम लोग बालतल से चले और 26 फरवरी को ज़ोजीला क्रॉस किया। ऊपर एवलांच भी आया, बाल-बाल बचे। उसके बाद हम ने उसको (हबीब लोन) को वापिस कर दिया। फिर वहां से हम मटायन होते हुए द्रास पहुंचे। द्रास में हम पहुंचे तो वहां एक हैडमास्टर थे, कश्मीरी पंडित। उसको मैंने पूछा, यहां ठंड कितना है, हमको तो उतना महसूस नहीं हुआ, उसने बताया, - 60 डिग्री है। हमने बोला बड़ा झूठ बोलता है, - 60 डिग्री! कौन रह सकता है? बाद में पता लगा कि दुनिया का दूसरा सबसे ज़्यादा ठंडी जगह है, हम को तो पता नहीं था। उसके बाद हम बोदखरबु, होते हुए 1 मार्च को करगिल पहुंचे। करगिल में स्टैट फोर्सेज़ का एक पलाटून था, कैप्टन भगत सिंह के कमान में। उनसे मिले। उसके बाद फिर हम पहले बुद्धिस्ट गांव मुलबेग पहुंचे। लोगों को जब पता लगा कि हिन्दुस्तान के फौजी आ रहे हैं, तो पूरा गांव उठकर आ गए और हम को माथा टेकने लगे जैसे भगवान आ रहे हों। उन्होंने हाथ में धूप उठा के रखा था, कि भई हमारे संरक्षण के लिए आ रहे हैं। उन्होंने हमें बताया कि हमने यह फैसला किया था कि हम सब पहाड़ों में भाग जाएंगे। एक लामा जी थे, एक गोम्पा है, बोला मैं लंगड़ा हूं, चल नहीं सकता, तुम मुझे छोड़ जाओ। मेरा पड़ौसी मुसलमान है, हम बचपन के दोस्त हैं, उसने कहा है कि मैं बताऊंगा कि यह मेरा भाई है, पर कलमा पढ़ना पड़ेगा।उसने कलमा पढ़ना सिखाया है। मैंने कहा कैसे-कैसे? लामा जी बोले-- 'बिस्मिल्ला-उर-रहमान-उर.....।' लामा बेचारा क्या करता!

उसके बाद हम आगे बढ़ते गए। जहां-जहां भी गांवों में पहुंचे लोगों ने बड़ा भारी स्वागत किया। फिर लम:युरु होते हुए 9 मार्च को हम लोग लेह पहुंचे। लेह में जब पता चला कि हिन्दुस्तान का फौज आ रहा है तो सैंकड़ों आदमी मील दो मील दूर घोड़ों पर चढ़ के आ गए हमारे स्वागत के लिए। तिबतन ट्रेडर्ज़, चाइनीज़ ट्रेडर्ज़, सिक्याङ के ट्रेडर्ज़, हिन्दुस्तान-नेपाल के ट्रेडर्ज़, लद्दाख के लोग, सौ-डेढ़ सौ आदमी। हम तो गुम ही हो गए। फिर वहां बड़ा स्वागत हुआ। लेह में तहसील दार, नायब तहसीलदार मुसलमान थे। तहसीलदार जो था वह पाकिस्तान का हिमायती था। वहां पहुंचे तो उसने कहा कि आप लोग किले में ठहरो। हमने कहा किले में नहीं रहेंगे। हम ब्रिटिश जोइंट कमिश्नर के रेज़ीडेंस (=आवास) में रहेंगे।

फिर हुक्म दिया कि सारे लेह के लोग इकट्ठे हो जाओ, हम आपको लेक्चर देंगे। 13 मार्च के दिन सारा बन्दोवस्त किया, लामा बगैरे का बन्दोवस्त किया। ब्रिटिश जोइंट कमिश्नर के आवास के सामने लगे यूनियन-जैक को सलामी करके उतारा और अपना हिन्दुस्तान का पहला झंडा वहां पर फहराया। उसके बाद फिर मैंने लेक्चर दिया। मैंने कहा, देखो, हम लोग 10-15 आदमी आए हैं आप लोगों की सेवा के लिए, देश की रक्षा के लिए। आप लोग बिल्कुल घबराएं नहीं। अभी बर्फ पड़ी हुई है, रास्ता बन्द है, तब तक आप लोग खुद हथियार उठाओ और लड़ने के लिए तैयार हो जाओ। हम लोग आपको हथियार की ट्रेनिंग देंगे। बाद में तो कई कुछ किया जा सकता है। मैंने कहा, आप लोग, लद्दाख के लोग वह बहादुर कौम है जो चंगेज़ खां के फौज से टकराए थे, तिब्बत

के हमले को झकझोर दिया था, आप लोगों की रगों में वही खून है। आप लोग आगे आओ, हम हथियार चलाना सिखाएंगे। हर घर से एक-एक आदमी कुर्बानी के लिए तैयार हो जाओ। तो उसके बाद मैंने कहा, क्या कोई निकलता है? एक जवान खड़ा हुआ, मैं आता हूं सर। वह छेवङ रिनचेन था, नुबरा वैली का छोकरा, 9वीं क्लास में पढ़ता था, 17 वर्ष का लड़का। वह पहला आदमी था। तो लोगों ने फिर वालंटियर किया, कहा कि आप लोग के लिए हम जान देंगे, आप लोग शुरू करो। मर्द, औरत सब चले आए, फिर हमने उसमें से छांट कर 200 जवान खड़े किए। उनको ले कर हमने ट्रेनिंग दी।

इस बीच नुबरा में ज़्यादा खतरा हो गया। तो सूबेदार भीम चन्द को हमने एक पलाटून बना के उधर भेज दिया। उधर उन्होंने दुश्मन को खूब मारा। और उसके बाद सूबेदार भीम चन्द का वापिस आने पर बड़ा भारी स्वागत हुआ। उसके बाद एक पलाटून और भेजा। फिर नुबरा में भी ट्रेनिंग शुरू कर दिया था। उतने को स्टैट फोर्सेज़ का दो पलाटून भी करगिल से पहुंच गए। उनमें से एक पलाटून नुबरा में भेज दिया। तो हमारा काम अच्छा चल रहा था। उसके बाद क्या हुआ, उधर नुबरा में भी पाकिस्तानी आने शुरू हो गए। इधर करगिल में भी खतरा हो गया था। करगिल में कर्नल सम्पूर्ण बचन सिंह 1 सिक्ख का फोर्सेज़ ले के आए थे, उनको स्कर्दू जाना था। उसके बाद कर्नल किरपाल सिंह पूरा बटालियन लेके करगिल पहुंचा। लेकिन जब वे जाने लगे तो कुली सब बेईमान निकले, वे पाकिस्तान के हिमायती थे। रातों रात सब भाग जाते थे। बहुत धोखा दिया उनको। मुझे पहले ही डी. पी. धर साहब ने मैसेज भेजा था कि कुली भेजो।मैंने 150 कुली और 50 घोड़े भेजे थे, कर्नल किरपाल सिंह के पास। वे पहुंचने वाले थे उसके पास। मैंने कहा कि मुझे ऐसे-ऐसे कुली भेजने का हुक्म मिला है। उसने कहा, किसने कहा तुम को कुली भेजो, किसने कहा तुम को घोड़े भेजो? मेरे पास राजा खानमर्ग खड़ा है, वह खुद और उसके सब आदमी मेरे साथ हैं। मैंने कहा पहले भी कई दफ़ा धोखा लग चुका है तुम धोखे में मत जाओ। बाद में वही हुआ और बुरी तरह नुकसान उठाना पड़ा। स्कर्दो में मदद भी नहीं पहुंच पाया। स्कर्दो में क्या हुआ था कि दुश्मन ने आ कर घेरा डाल रखा था। वहां जो था, कर्नल शेर जंग थापा, उसके पास 100-150 आदमी थे। बाकी सिविलियन थे हिन्दु-सिक्ख वहां के। 6 महीने 3 दिन तक वह लोग घेरे में रहे। बेचारों का राशन-पानी, एमूनिशन सब खत्म हो चुका था। कोई भी मदद नहीं पहुंच सका वहां। जनरल थिमय्या बगैरा ने बहुत कोशिश किया, पर कामयाब नहीं हो सके। अब स्कर्दो में उनके होने से यह फायदा हुआ कि नुबरा वेली की तरफ से ट्रूप्स (=फौजी दस्ते) नहीं आ सके। अगर वह नहीं होता तो हमारा लेह गया था। बाद में सम्पूर्ण बचन सिंह के फौजों को दुश्मन ने एम्बुश (=घात लगा कर हमला) कर दिया। उन्होंने सिंधु नदी में छलांग लगा कर जान बचाया, आधे डूब गए, आधे भूखे-नंगे मेरे पास पहुंचे। फिर मेजर कौट्स भी पहुंचा। उस से मेरा मोराल डाऊन हुआ (=मनोबल गिरा)। उधर ज़ोजीला को पाकिस्तान ने कब्ज़ा में कर के रखा था। पहाड़ में ऐसा पक्का मोर्चाबन्दी कर रखा था कि निकल नहीं सकते थे। करगिल भी दुश्मन के हाथ चला गया था।

अब खल:चे में क्या हुआ, मेजर खुशहाल चन्द को मैंने भेज दिया था पेमेंट के लिए। लद्दाख सिविल सप्लाई चलता था। वह मेमेंट करके आ गया, जिस दिन खल:चे पहुंचा उसी दिन वहां पर दुश्मन पहुंच गया और गोली बारी शुरू कर दिया, दरिया के पार से। रात को सारे लोग भाग गए, पब्लिक भाग गया, जो स्टेट फोर्सेज़ के लोग ड्यूटी पर थे वह भाग गए। खुशहाल चन्द और हमारे चार-पांच सिपाही थे, वह रह गए। खुशहाल ने कईप्लेस पर बताया कि ऐसा-ऐसा हुआ है, तो क्या करना है? मैंने कहा, तुम पुल को जला दो और तुम लोग एम्बुश करते रहो, जो भी आएगा मारते जाओ। एक 3 इंच मोर्टार बम का टुकड़ा खुशहाल की आंख में लग गया, पर वह डटा रहा। इस तरह एम्बुश करते-करते रोके रखा उनको। और कोई तरीका नहीं था। उस बीच मैंने जनरल थिमय्या को मैसेज भेजा कि मेरे पास कोई ट्रूप्स नहीं हैं, कुछ भी नहीं है, क्या करना? कल-परसों तक आप कुछ न कुछ करो। मैंने कहा, आपने कहा था कि हवाई जहाज़ से मदद भेजूंगा, डेढ-दो महीना हो गया है कोई जहाज़ नहीं आया। लोग तो यह कह रहे हैं कि पाकिस्तान का हवाई जहाज़ तो उतर सकता है मगर हिन्दुस्तान का जहाज़ नहीं उतर सकता है। फिर एक दिन, देखा तो हे

भगवान, एक हवाई ज़हाज उतर रहा है। मैं फौरन घोड़े पर चढ़ के वहां से दौड़ा। रास्ते में खयाल आया कि कहीं पाकिस्तान का जहाज़ तो नहीं। वहां गया तो जनरल थिमय्या मिले और एयर कोमोडोर मेहर सिंह मिले, एयर फोर्स का पायलेट। मैंने कहा कि मेरे पास रेगूलर ट्रूप्स (=नियमित टुकड़ियां) नहीं है और जो अनियमित टुकड़ियां तैयार की हैं ये पूरी तरह ट्रेण्ड (=प्रशिक्षित) नहीं हैं। यदि मुझे आप एक बटालियन फौज दे दें तो मैं वचन देता हूं, हम न केवल इन हमलावरों को भगाएंगे बल्कि नुबरा और चोरबाटला दर्रा होते हुए स्कर्दो की ओर भी बढ़ेगें। जनरल ने मुझे कहा कि तुम किसी भी सूरत में इस हवाई अड्डे की सुरक्षा करना, मैं तुम्हारी मदद के लिए और फौज

तत्कालीन रक्षा मंत्री कृष्णा मेनन के साथ श्रीनगर हवाई अड्डे पर

भेजूंगा। फिर मेरा मोराल (=मनोबल) कुछ बढ़ा।

फिर स्टैट फोसेर्ज़ के जो आदमी भाग गए थे वह भी दाहिने-बाहिने गांवों से निकल आए। उनको ले के दोबारा खल:चे पहुंचा। वहां ऊपर एक गांव है वहां जाके बैठा। गांव से खल:चे पुल को खबर भेजा रातों-रात, पता लगा कि पाकिस्तान के कुछ चार एक मिस्त्री और उतने ही सिपाही खल:चे में एक मकान में बैठे हुए हैं। हमने रातों-रात उस मकान को घेर लिया और गर्नेड डाल के खत्म कर दिया। फिर वह लोग जो पुल बनाने की कोशिश कर रहे थे वह भी जलाके खत्म कर दिया। सुबह मैंने कहा, तुम खल:चे पुल पे जाओ, वहीं हवलदार, वही जमादार, वहीं सिपाही जो सब से पहले खल:चे से भागे थे, मैंने उन्हीं की ड्यूटी लगा दी उधर। उस दिन पाकिस्तान का एक जे.सी.ओ. और तीन सिपाही पुल के पास आ कर इधर आवाज़ देने लगे-वे कुली क्यों नहीं भेजा? इन्होंने उन सब को गोली मार के खत्म कर दिया। तब पता लग गया उनको कि हिन्दुस्तान के फौज ने मोर्चा संभाल लिया है। अब मैं खल:चे के ऊपर स्किन्दियङ गांव में बैठा हूं, रोज़ चार आदमी एम्बुश लगाते थे पुल पर। एक दिन हो गया, दो दिन हो गया, चार दिन हो गया, पांच दिन हो गया, मैंने कहा अब क्या करें। श्रीनगर से कोई मदद नहीं पहंची। फिर से मेरा मोराल डाऊन होने लगा। छह दिन के बाद छह डकोटा आ कर लेह में उतर गए। फिर मेरा मोराल ऊंचा हुआ। 2/4 गोरखा का 77 आदमी का एक कमज़ोर कम्पनी एक नातजुर्बेकार लेफ़्टीनेंट की कमान में पहुंचा। मैंने कहा कि तुम यहां डिफैंस (=सुरक्षा) लो। और ऑर्डर आया कि हो सके तो आगे बढ़ो। तो वह लोग डोम्खर तक चले गए। बाद में पाकिस्तान का और आर्मी पहुंच गया, ये लोग घेरे में आ गए और पीछे हट कर हिमिशुक्पाचन गांव में आ कर पोज़ीशन ले लिया।

उतने में लाहुल से हो कर 2/8 गोरखा का एक कम्पनी आ गया। 40-42 दिन पैदल मार्च करते हुए बड़ी मुश्किल से वे लेह पहुंचे। लेह में एक दिन रैस्ट करने के बाद सीधे मेरे पास पहुंचे। जब वे स्किन्दियङ में पहुंचे तो मैं बड़ा खुश हुआ कि एक कम्पनी और आ गया। मेजर हरी चन्द था, उनका कमांडर। उनको भी मैंने हिमिशुक्पाचन में लगा दिया। अब लड़ाई भी क्या करना भूखा-प्यासा, बुराहाल हमारा। हिमिशुक्पाचन में हमारे मोर्चे के ऊपर एक पहाड़ पर गिलगित स्काऊट्स ने पोज़ीशन ले लिया था। मेजर हरी चन्द ने दुश्मन पर हमला करने का स्कीम बनाया। सुबह-सवेरे तीन बजे गए दुश्मन के हैडक्वार्टर की तरफ। वह उधर गया, तो दुश्मन ने सोचा, जब देखा उन्होंने पहाड़ की चोटी से, कि ये लोग भाग रहे हैं। वे सुबह सीधे उतर के नीचे चले आए। मैं सुबह पांच बजे उठके सिगनल वालों के पास गया और कहा कि हरी चन्द से सम्पर्क करो। तभी हमने देखा, बड़े लम्बे-लम्बे 15-20 आदमी आ रहे हैं, गोरखे तो छोटे-छोटे थे हमारे जैसे, मैंने कहा ये तो पाकिस्तानी हैं। एकदम हमने मशीनगन से फायर शुरू कर दिया। वहां एक गांव था। वह लोग वहां एक घर में घुस गए। और हमारे ऊपर फायर करने लगे। फिर उनकी

और फौज भी आ गई। इस बीच जब हरीचन्द को पता लगा कि पीछे हमला हुआ है तो वह भी वापिस आ गया और उस मकान को घेर लिया। उसके बाद जो सब से ऊंची चोटी थी, वहां से हम पर फायरिंग शुरू हो गया। अब मेजर हरी चन्द को भी बाजू पर गोली लग गई, चार सिपाही भी मारे गए। हम लोगों को पीछे हटना पड़ा। मेजर हरी चन्द ने कहा कि अब क्या करना है? जो कुली पीछे लद्दाख से आए थे, कुछ लोग भाग गए। मैंने कहा मेजर तुम लेह जाओ, वहां का इन्तजाम देखो और अपना ठीक से इलाज़ करो। उसने कहा, नहीं, मुझे पता नहीं है कि कहां से राशन लेना है, कहां से क्या करना है, आप जाओ हम लड़ेंगे।

फिर मैं वहां से 50 मील फासला रातों-रात तय कर के लेह किले में पहुंचा। किले में जाके जब दरवाज़ा खोला तो पता चला कि वहां पर इतना ज़बरज़स्त अफवाह फैल गया था कि कर्नल पृथी चन्द, 2/8 गोरखा सब खत्म हो गए। तो वहां एक हवलदार गोरखा था, उसने मिलीशिया सिपाहियों को ऑर्डर दिया हुआ था कि देखो, फौज हारता भी है जीतता भी है, इस बार हम को हटना पड़ रहा है, लेकिन यहां दुश्मन का जो भी एजेंट होंगे उनको खत्म कर के जाना है। लेह बाज़ार में घेरा डाल दो और किसी भी मुसलमान को जाने नहीं देना। शुक्र है तभी मैं पहुंच गया, नहीं पहुंचता तो पता नहीं क्या हालात बन जाते। मैंने फोरन हुक्म दिया कि मेरे ऑर्डर के बगैर कोई कदम नहीं उठाना और यह भी बताओ सब को कि मैं आ गया हूं और यह अफवाह बिल्कुल झूठी है। उस के बाद लोगों का मोराल अप हुआ।

बाद में यह हुआ कि उधर से हिन्दुस्तान के फौज आ गए ज़ोजिला में। वहां टैंक आ गए। टैंक आने पर पाकिस्तानियों को भागना पड़ा। इधर से हम लोग गए। फिर सूबेदार भीम चन्द का पार्टी भेज दिया नुबरा वेली में। उसने एक पहाड़ और पकड़ा दिसम्बर में। उसके बाद फिर सीज़ फायर हो गया। पूरे लद्दाख और नुबरा में सूबेदार भीम चन्द ने बहुत काम किया। और उनके ऊपर लद्दाख वालों का इतना आत्मविश्वास था कि सूबेदार भीम चन्द जो काम करने को कहता, वह पहले ही मान जाते थे। बाद में घरवाली के गुज़र जाने पर वह लाहुल आया तो वहां से ज़ंस्कर भी गया, ठाकुर निहाल चन्द के साथ। ज़ंस्कर में खतरा हो गया था दुश्मन पहुंच गए थे। बहुत बहादुर आदमी था वह। बहुत हार्डवर्किंग (=कठिन परिश्रमी) था। मेजर खुशहाल चन्द बेचारा बीमार हो गया, उसको हर्निया हो गया था। बीच में ही उसको जाना पड़ गया था, ईलाज के लिए। भीम चन्द का साथ मिला भरपूर। बस ईमानदारी, सच्चाई के ऊपर भीमचन्द का मुकाबला नहीं था। भीम चन्द न होता तो मैं कामयाब नहीं हो सकता था। इस लद्दाख मिशन में कामयाब अगर मैं हुआ तो भीम चन्द की वजह से।

बाद में मैं करगिल में चला आया था। वहां मुझे आर्डर मिला कि तुम लेह चले जाओ। मैंने कहा, नहीं जाऊंगा। फिर श्रीनगर आया, वहां एक-डेढ़ महीना रहा। फिर ऑर्डर मिला कि तुम उड़ी में जाओ। इस बीच फिर ऑर्डर मिला कि लेह में जाओ और वहां अपना बयान दर्ज करो। क्योंकि वहां पर लाखों का स्टोर बगैरा हम छोड़ गए थे, उसमें गड़बड़ी कर दिया था उन्होंने। बीस दिन लेह में रह कर फिर पून्छ में अपने बटालियन में आ गया। फिर मैं लम्बे अर्से तक सब्ज़ियां नहीं खाने के कारण बीमार हो गया। मुझे कुछ भी याद नहीं रहता था। बाद में कर्नल रोडरिग्ज़ ने जम्मू में जाकर मुआयना किया, बोला कि तेरा हार्ट, लिवर, किडनी (दिल, जिगर,गुर्दे) सब गड़बड़ है। फिर वहां से मुझे दिल्ली अस्पताल में भेजा गया। तीन महीना वहां रहा। लो केटेगरी कर्नल से मेजर बना दिया गया, छह महीने की छुट्टी ली। फिर पालमपुर पोस्टिंग लिया। उसके बाद दोबारा मैडिकल चैक अप किया, छह महीने बाद केटेगरी बहाल हो गया। बाद में हम को ऑर्डर आया कि तुम श्रीनगर आओ। हमारा पलाटून सीधा श्रीनगर आया, वहां आ कर शेख अब्दुल्ला को एरेस्ट (=हिरारत में लेना) किया और यह जो फारूख अब्दुल्ला, हमारा, उसको एरेस्ट किया। बड़ा भारी काम किया हमने वहां।

उसके बाद, तकरीबन 6-7 साल से मेरी पत्नी ने कश्मीर नहीं देखा था, नॉन फेमिली स्टेशन पर था, उसने मुझे कहा कि कश्मीर देखना है। शुक्र करो भगवान का कि सर्दियों में वह आई, तीन महीने बर्फ में रहे, अप्रैल में ऑर्डर आया कि मुझे इन्डो-चाईना जाना है। बेचारी वह और कश्मीर भी नहीं देख पाई। फिर मैंने इन्डो-चाईना में साल डेढ़ साल काम किया इन्टरनेशनल कमीशन में। हॉलैण्ड, इग्लैण्ड, पोलैण्ड

शेष पृष्ठ 26 पर...

लेफ्टीनेन्ट कर्नल खुशाल चन्द (महावीर चक्र)

-अशोक ठाकुर,

लेफ्टीनेन्ट कर्नल खुशाल चन्द (महावीर चक्र) का जन्म लाहुल की तोद घाटी में स्थित खङसर गांव (उस समय पंजाब के ज़िला कांगड़ा के अंतर्गत) में 22 सितम्बर, 1919 को हुआ। सैन्य जीवन एक तरह से उन के परिवार का पारम्परिक व्यवसाय था। उन के पिता ठाकुर मंगल चन्द ने प्रथम विश्व युद्ध के लिए सेना में भर्ती के लिए कार्य किया। उन के चाचा रायबहादुर ठाकुर अमर चन्द जो लाहुल के वज़ीर थे, ने बग़दाद तथा मेसोपोटेमिया में वाईसरॉय के कमिशन्ड अफसर के रूप में सेना में सेवा की। उन के दो चचेरे भाई ठाकुर अभय चन्द तथा ठाकुर प्रताप चन्द बतौर *क्वीन्ज़ कमीशन्ड ऑफिसर* भारतीय सेना में क्रमशः ऑनरेरी लेफ्टीनेन्ट तथा कैप्टन के पद पर कार्यरत रहे।

मेजर खुशाल चन्द

उन के पिता ठाकुर मंगल चन्द अपूर्व प्रतिभा के स्वामी थे। उन्होंने सम्पूर्ण पश्चिमी हिमालय तथा तिब्बत की यात्रा की थी तथा वे एक अच्छे तिब्बतियनविद् एवं तिब्बती चिकित्सा के ज्ञाता होने के साथ-साथ एक कुशल प्रशासक भी थे। वे कुछ समय के लिए लाहुल के वज़ीर तथा मालगुज़ारी एवं वन अधिकारी भी रहे। वे एक अच्छे छायाचित्रकार, वनस्पति शास्त्री तथा थंका पेंटिंग के उस्ताद थे। वे एक प्रयोगशील कृषक थे जिन्होंने लाहुल में सब्ज़ियों के बीज, हॉप्स तथा केसर की खेती में नए प्रयोग किए और मनाली में सेब तथा चाय पर कार्य किया। और सब से बढ़ कर उन्हें लाहुल के इतिहास तथा यहां के लोगों के बारे आश्चर्यजनक जानकारी थी। वे धाराप्रवाह तिब्बती, अंग्रेज़ी, उर्दू तथा हिन्दी बोल सकते थे।

ठाकुर खुशाल चन्द के एक छोटे भाई ठाकुर निहाल चन्द राजनीति में भी सक्रिय रहे तथा बाद में वह हिमाचल प्रदेश कांग्रेस पार्टी के उपाध्यक्ष पद तक पहुंचे।

क्योंकि खुशाल चन्द के पिता तथा चाचा शिक्षित थे, अतः वे अपने अन्य साथियों की अपेक्षा कुछ अधिक सौभाग्यशाली रहे। उन्हें स्कूल तथा कॉलेज जाने का अवसर मिला। प्राथमिक शिक्षा उन्होंने अपने मामा के साथ रहते हुए केलंग में प्राप्त की। सन् 1935 में उन्होंने कुल्लू से मेट्रिक पास की। उच्च शिक्षा के लिए उन्हें लाहौर भेजा गया जहां उन्होंने 1937 में सनातन धर्म कॉलेज में प्रवेश लिया तथा सन् 1940 में स्नातक की डिग्री प्राप्त की। वे लाहुल के प्रथम स्नातक थे। 7 नवम्बर, 1940 को टेरेटोरियल फोर्सेज़ में कमिशन के लिए उनका चयन हुआ। उसी दौरान जब 15 सितम्बर, 1941 को सभी टेरेटोरियल फोर्सेज़ का नियमित सेना में विलय हुआ तो वे भी भारतीय सेना में शामिल हो गए। सन् 1948 में जब वे रेजिमेंटल सेंटर में एक कम्पनी का संचालन कर रहे थे, उन्हें बतौर केप्टन पदोन्नत किया गया। 19 दिसम्बर, 1947 को वे मेजर बने। अगले वर्ष सन् 1948 में वे लेफ्टिनेंट कर्नल बने, जब कि उनकी आयु केवल 29 वर्ष की थी। वे भारतीय सेना में अपने समय के सब से कम आयु के ले. कर्नल थे। वे सन् 1948 से पूर्व 4 वर्ष तक उत्तर पश्चिमी सीमा पर सैन्य कार्यवाही में रहे तथा एक वर्ष श्रीलंका में 26 वें डोगरा रेजिमेंट के साथ गैरीसन ड्यूटी पर रहे। लेकिन उनकी कीर्ति का असली क्षण 1948 में लद्दाख में आया जब उन्हें महावीर चक्र से सम्मानित किया गया। वे अपने दो साथयों - चचेरे भाई कर्नल पृथी चन्द तथा ठाकुर भीम चन्द के साथ "लद्दाख के मुक्तिदाता/रक्षक" के नाम से जाने जाते हैं। यह लाहुल के तीन सपूतों के लिए अभूतपूर्व गौरव की बात है।

सन् 1947में उनकी बटालियन को पश्चिमी पाकिस्तान को शरणार्थियों से खाली करवाने का काम सौंपा गया। 31 अगस्त, 1947 को वे जालन्धर लौटे और शीघ्र ही उन्हें काश्मीर घाटी को घुसपैठियों से बचाने के लिए भेजा गया। आधी बटालियन विमानों द्वारा रवाना हुई, जिस में वे स्वयं भी शामिल थे। शेष सड़क के रास्ते

से गए। जब वे श्रीनगर पहुंचे, हवाईपट्टी के आस-पास के गांव जला दिए गए थे तथा धुएं के कारण विमानों को उतरने में दिक्कत हो रही थी। बड़ी मुश्किल से विमान उतारे गए। श्रीनगर में उनकी कम्पनी को हवाई पट्टी की सुरक्षा एवं ग्रामीण क्षेत्रों में गश्त् का कार्य सौंपा गया। दो दिन बाद उनको तथा एक अन्य कम्पनी को बारामूला-उरी मार्ग पर रामपुर नामक स्थान पर कब्ज़ा करने के लिए भेजा गया। यद्यपि दुश्मन चारों ओर फैला था तथा उनकी टुकड़ी पर एक बार हमला भी हुआ; फिर भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी, ठंडे दिमाग से काम लेते हुए वे आगे बढ़ते रहे और रामपुर पर कब्ज़ा कर लिया। वहां से उन्हें पुनः आगे बढ़ने के आदेश मिले और माहीवरा पॉवर स्टेशन पर कब्ज़ा करने के लिए कहा गया।

लद्दाख पर गिलगित और स्करदू की तरफ से आने वाले आक्रमणकारियों का खतरा मंडरा रहा था। भारतीय सेना में कुछ ऐसे अफसर तथा सिपाही चिन्हित करने के प्रयास किए जा रहे थे जो लद्दाखी भाषा बोल सकते हों तथा लद्दाखियों के साथ घुलमिल सकते हों। मेजर खुशाल चन्द को 20 अन्य लाहुलियों के साथ इस कार्य के लिए चुना गया। उनके साथ उनके चचेरे भाई मेजर पृथीचन्द थे जो ऑप्रेशन के नेता थे। लेह पहुंचने के लिए उन्हें ज़ोजिला दर्रे को जनवरी के महीने में पार करना था। यह एक ऐसा अभियान था जिस की पहले कभी कोशिश भी नहीं की गई थी। यह दल गुंड तक सड़क द्वारा गया लेकिन भारी बर्फबारी के कारण वहां फंस गया। दो दिन तक वहां फंसे रहने के बाद पोर्टरों पर तीन महीने का राशन लाद वे लोग पैदल ऊपर चढ़ने लगे। तीन दिन की ट्रेकिंग के पश्चात् बल्ताल पहुंचे जोकि ज़ोजिला की तलहटी पर स्थित है। वहां का विश्राम गृह बर्फ से पूरी तरह ढका हुआ था। राज्य सेना की एक कम्पनी रास्ते में उन के साथ शामिल हुई जो स्कर्दू गैरीसन की मदद के लिए जा रही थी। स्करदू गैरीसन उस समय दुश्मन से घिर चुका था। इस कम्पनी में 180 जने थे। ये लोग उस दिन बल्ताल में रुके। अगले दिन बर्फीली तूफान के कारण आगे बढ़ना कठिन हो गया। अफसरों ने मिल कर फैसला किया कि अनिश्चितता में फंसे रहने की बजाय तूफान का मुकाबला करते हुए आगे बढ़ना ही बेहतर होगा। और तूफान अंततः इस दल के लिए वरदान सिद्ध हुआ क्योंकि मार्ग के दोनों ओर तथा गांव में फैले हुए दूश्मनों को उम्मीद ही नहीं थी कि इतने भीषण तूफान में कोई आगे बढ़ सकता है। अतः यह टुकड़ी अनाहत, सुरक्षित ज़ोजिला के उस पार मट्टायन पहुंच गई। इस अद्वितीय अभियान को सफल बनाने के लिए टुकड़ी को छोटे-छोटे समूहों में बांट कर बारी-बारी कुछ दूरी तक प्रत्येक समूह से रास्ता साफ करवाया गया। इस उद्देश्य के लिए 20 व्यक्तियों का प्रयोग किया गया। टुकड़ी लगातार बर्फबारी में आगे बढ़ती रही तथा कारगिल पहुंची। इस दुरुह कार्य को अंजाम देने के लिए जम्मू काश्मीर सेना के कमांडर ने इस टुकड़ी की भूरी-भूरी प्रशंसा की। ये लोग दो दिन कारगिल में रुके तथा वहां उपलब्ध 200 राईफलों को लेकर लेह की तरफ चल पड़े। कड़ाके की ठंड में बिना बर्फ के उपकरणों की सहायता से ये साहसी सैनिक दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ते गए। 10 दिनों की लम्बी यात्रा के बाद ये लोग लद्दाख की राजधानी लेह पहुंचे। लद्दाख की जनता ने भारतीय सेना का बड़ी गर्मजोशी से स्वागत किया। वे लोग स्वागत के लिए पांच मील दूर पैदल चल कर आए थे।

मात्र 20 जनों से टुकड़ी के कमांडर तथा मेजर खुशाल चन्द ने स्थानीय देश रक्षक फौज खड़ी की तथा उन्हें प्रशिक्षण देना आरम्भ किया। छः प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए जिन में 200 राईफलें वितरित की गई। प्रशिक्षण दो महीने तक पूरे लद्दाख तथा नुब्रा घाटी में चला। मई में एक बुरी खबर आई कि दुश्मन ने कारगिल पर कब्ज़ा कर दिया है तथा लगभग आधा स्करदू गैरीसन नष्ट हो गया है। इस से टुकड़ी दोनों ओर से कट कर रह गई क्योंकि काश्मीर से लेह को जोड़ने वाला एकमात्र मार्ग कारगिल होकर था।

अतः टुकड़ी ने स्थानीय लोगों से मिलकर लेह में हवाई पट्टी का निर्माण शुरू कर दिया ताकि विमान द्वारा कुछ कुमुक पहुंचाई जा सके। लेकिन तब तक आक्रमणकारियों से लेह को बचाए रखना भी ज़रूरी था जो कि कारगिल की ओर से बढ़ते ही चले आ रहे थे। दुश्मन को रोकने के लिए मेजर खुशाल चन्द ने थोड़े से उपलब्ध साधनों के साथ खल्त्से नामक स्थान पर मोर्चा बांध लिया। तकरीबन 24 घंटे तक उन्हें उलझाए रखने के बाद उन्होंने अदम्य साहस का परिचय देते हुए एक सिपाही की मदद से खल्त्से पुल को नष्ट कर दिया। इस से दुश्मन का आगे बढ़ना सप्ताह भर के लिए रुक गया। इस बीच मौका पा कर वे रातों रात लेह पहुंचे तथा जनरल थमैया से मिले जो कि तब

तक सेना तथा स्थानीय जनता द्वारा निर्मित हवाई पट्टी की मदद से लेह में उतर चुके थे। उन्होंने जनरल थमैया से लेह की सुरक्षा के लिए भारतीय फौज की एक कम्पनी की मांग की। उनकी मांग स्वीकृत हुई तथा वे वापिस अपने सुरक्षा ठिकाने लौट गए। शत्रु के भारी दबाव के चलते वे उस कम्पनी की मदद से महीना भर अपने सुरक्षा ठिकाने पर डटे रहे। इस का लाभ यह हुआ कि गोरखों की एक बटालियन को मनाली से लेह बारालाचा दर्रा पार कर के पहुंचने का समय मिल गया।इस प्रकार अगर लद्दाखी जनता तथा लाहुली सैनिक बहादुरी के साथ दुश्मन का मुकाबला न करते तो लद्दाख हमेशा के लिए शत्रुओं के कब्ज़े में जा चुका होता।

इस बहादुरी तथा अभूतपूर्व कार्य को सरअंजाम देने के लिए मेजर खुशाल चन्द को महावीर चक्र से सम्मानित किया गया। उनके प्रशस्ति पत्र में लिखा है -

"मेजर खुशाल चन्द फरवरी सन् 1948 में उन दो अफसरों में से एक थे जो स्वेच्छापूर्वक लेह जाने के लिए तैयार हुए ताकि वहां स्थानीय मिलिशिया खड़ी की जा सके तथा लेह की सुरक्षा का प्रबन्ध किया जा सके।

चार माह तक इस युवा अफसर ने ज.एण्ड.के. स्टेट फोर्सेज़ के एक पी.एल. तथा 20 स्थानीय मिलिशिया जो कि जल्दबाज़ी में प्रशिक्षित किए गए थे की मदद से दुश्मन को दक्षिण में सिन्धु के साथ-साथ लेह की ओर बढ़ने से रोका। मेजर खुशाल चन्द ने बेहतरीन गुरिल्ला युद्ध का प्रदर्शन करते हुए दुश्मन को इस भ्रम में रखा कि उनके पास उस से कहीं अधिक मात्रा में लश्कर है जितना कि उन के पास वास्तव में था। एक अवसर ऐसा भी आया जब उन्होंने खल्त्से पुल को एक सिपाही की मदद से 24 घंटे तक सम्भाले रखा। रात को उस सिपाही को ढाल बनाकर अंधा-धुंध गोलाबारी में स्वयं क्रॉलिंग करते हुए नीचे पुल तक पहुंचे और उसमें आग लगा दी। इस से शत्रु एक सप्ताह के लिए वहीं रुक गया।

क्योंकि लेह के साथ सम्पर्क का कोई साधन नहीं था, अत: इन्हें लगातार स्वयं लेह तक जाना पड़ता था, ताकि वहां की गतिविधियों की सही तस्वीर मुख्यालय में पहुंचती रहे।

पूरी कार्यवाही के दौरान बिना पर्याप्त मात्रा में

शेष पृष्ठ 33 पर...

वर्तमान करगिल युद्ध कितना महंगा

मोर्चे पर अनुमानित लागत

एक रोटी	=	रु. 35 से 45
एक थाली चावल	=	रु. 55 से 65
एक अण्डा	=	रु. 25
250 ग्राम दूध	=	रु. 65
एक लीटर मिट्टी का तेल	=	रु. 128
बोफोर्स तोप के एक गोले का मूल्य	=	1000 डालर (रु. 44,000)

सैनिक टुकड़ियों की साधारण संख्या

सैक्शन	10 सैनिक
प्लाटून	3 सैक्शन (लगभग 30 सैनिक)
कम्पनी	3 प्लाटून (100 से 120 सैनिक)
बटालियन	3 से 4 कम्पनियां
ब्रिगेड	3 बटालियन

पृष्ठ 23 का शेष भाग...

और कैनेडा के लोग थे। हमने वहां बड़ा अच्छा काम किया। उसके बाद जब मैं वापिस आया तो मुझे तारागढ़-बेस कमांडर बनाया गया। वहां मैं साल-डेढ़ साल रहा। फिर ऑर्डर आया कि लखनऊ में जाओ। लखनऊ में तीन-तीन महीने काम किया, चार बार। उसके बाद ऑर्डर मिला कि तुम गोरखपुर जाओ, गोरखा रेजीमेंट में। वहां साढ़े तीन साल रहा। उसके बाद पता चला कि आर्मी हैडक्वार्टर में तिब्बती बोलने वाला कोई नहीं है तो फिर आर्मी हैडक्वार्टर इण्डियन-स्क्वैड में मेरा तबादला हो गया, इन्टेरोगेशन ब्रांच में। (=पूछताछ शाखा) 1960 में मेरा तबादला शिमला में कर दिया गया कमांडर सर्पलस बनाकर। और काम मेरा क्या था, लद्दाख, लाहुल-स्पीति-किन्नौर से जो व्यापारी तिब्बत जाते थे, उन से इन्फोर्मेशन (सूचनाएं) लेता था। चीन के ट्रूप्स वगैरा का, कहां हैं, कैसे हैं, उनका पता लगाना। दो साल वह काम किया। बाद में चीनियों का जब हमला हो गया तो इन्होंने वह तिबतन व्यापार जो था, बन्द कर दिया। तो मैंने कहा, अब मेरा क्या काम यहां। 31 दिसम्बर, 1962 को मैं रिटायर हो गया।

स्वर्गीय कैप्टन भीम चन्द के शौर्य की कहानी : उनकी अपनी ज़बानी

सन 1948 में फरवरी महीने में हम श्रीनगर से लद्दाख को रवाना हुए थे। लद्दाख में दुश्मन पहुंच चुके थे। तो, ज़ोजीला क्रॉस करना था। तीन सौ कुली के साथ लाहुल के कर्नल पृथ्वी चन्द (तब मेजर), खुशाल चन्द, यह सारे लगभग बीस एक आदमी थे। हम ज़ोजीला क्रॉस करके गए। ज़ोजीला क्रॉस करने के बाद हम द्रास में पहुंचे। वहां से आगे इलाका सूखा था, बर्फ नहीं था। फिर वहां से घोड़े, याक, बैल पर सवारी करके हम करगिल पहुंचे।

करगिल पहुंच कर, स्टेट का थोड़ा सा आर्मी था, उन लोगों ने वहां हमारा स्वागत किया। फिर उधर मैसेज (संदेश) आया, 'दो हज़ार दुश्मन ज़ोजीला के नज़दीक पहुंच रहा है।' फिर हम लोगों ने तो लद्दाख जाना था। दूसरे दिन वहां से बल्तियों को कुली करके हम उधर से भी सवारी बैल, याक, घोड़ा वगैरा करके मुलबेग पहुंचे। फिर वहां से बोद-खर-बु, छोटा सा जोत है, उसको क्रॉस करके लमा-युरु में पहुंचे। लमा-युरु से जा के खलेचा में पुल है, वह पुल क्रॉस कर ञुर-ला जगह है, उधर पहुंचे। फिर जाते-जाते हम लद्दाख पहुंच गए। लद्दाख पहुंच कर जो लद्दाखी लड़के मिलीशिया में भर्ती करके रखे हुए थे, पन्द्रह सौ के करीब थे, उनको ट्रेनिंग देना शुरू किया। तो हम लोगों के पास दो सौ राईफल ही कुल था। फिर ट्रेनिंग देते-देते, उतने में नुबरा वैली की तरफ दुश्मन पहुंच गया। फिर लोकल मिलीशिया, लद्दाखी लड़के भर्ती किए हुए, को ले के हम खरदुङ-ला क्रॉस कर के नुबरा को गए। नुबरा जा कर के, उधर पांच-छह सौ लड़के भर्ती किए हुए थे, उनको ट्रेनिंग देना शुरू किया। तो महीना के करीब हमने ट्रेनिंग दिया। फिर तब हमारे पास ज़्यादा तो था नहीं, तीन-तीन कारतूस फायर करके ट्रेनिंग दिया।

फिर हम को मैसेज मिला कि दुश्मन बल्तिस्तान की तरफ से निकल गया है। फिर हम उधर चले गए, कलोन लामा था, और यह, क्या कहते हैं, वह लोनपो था, तो हम सारे वहां जाके वरिस के नज़दीक दरिया के किनारे पर मोर्चे बना कर बैठ गए। रात को दुश्मन आ गया, पहाड़ों से, वहां से फायर करना शुरू कर दिया। अब अजीब बात यह हुई, हमारे साथ जो कलोन, होनर, लोनपो वगैरा आए हुए थे वह डर के मारे, एक सफेद से छुबा (चौगा) पहन कर नज़र आ रहे हैं। मैंने कहा, यह तू कौन है, क्या कर रहा है? बोला, काला पहने हुए को तो यह (दुश्मन) गोली मारता है, सफेद पहनने वाले को नहीं मारता। क्या बेवकूफ आदमी! फिर उन्होंने भागने की कोशिश की। बस, घोड़े पर काठी चढ़ाने लगा, वह दुमची (काठी की वह रस्सी जो पूंछ के नीचे फंसाई जाती है) को गले में फंसा रहा, ओ यह तो चढ़ ही नहीं रहा, घबरा कर के, (हंसते हैं) ह:ह:ह:! बड़ी हैरानी की बात है, न! बस, फिर वह लोग भाग गए। मैंने खूब शराब पी उधर बैठकर।

फिर दूसरे दिन हाउंडी (पैदल वाले) आए। फिर हमारे साथ वह जो लड़के थे, जिनको ट्रेनिंग दे रहे थे, उनको साथ लेके हम आगे चल पड़े। स्टेट का भी एक पलाटून था, तो उन के साथ आगे चले। अब हमारे लड़कों को पूरे को हथियार तो नहीं था, वर्दी भी नहीं थी, लद्दाखी चौगा पहनकर के चले। बस, उधर जा करके बोगदङ में दुश्मन ने मोर्चा पकड़ लिया। अब, एक ओद-मरू जगह है, वहां से ऊपर बीस हज़ार फुट बुलंदी पर रास्ता है, बिल्कुल बर्फ का रास्ता है, कोई सूखा जगह नहीं। फिर उधर रास्ते में कैम्प लगा कर, दूसरे दिन बारह लड़कों को साथ लेकर मैं ऊपर जोत पर देखने को गया, बाकियों को कहा कि अगर ठीक है तो हम आगे चले जाएंगे, तुम लोग कल आ जाना, नहीं तो हम वापस आए। फिर हम वहां से गए तो, ओह्-हो! बर्फ का ही मैदान है।

मेरा इरादा यही होता था कि कभी पीठ दिखाकर के पीछे नहीं हटना, आगे बढ़ना छाती दिखा कर। फिर हम चल पड़े। एक-एक जेब में बुरटुग रोटी (=बुटोरू) था, एक-एक कम्बल था, और कुछ नहीं। फिर चल पड़ा, चल पड़ा, बस उनको ट्रेनिंग देता ... छुपना, आगे बढ़ना, वह तरीका बताता बताता गया। बस, ऊपर बर्फ के ऊपर ही रात हो गया।

अब खाना पकाने के लिए कोई जगह नहीं, कोई सूखा जगह नहीं! अब क्या करें, फिर उधर ही, बस ऐसे ही सारे इकट्ठा होके बैठ गए। दूसरे दिन फिर हम नीचे उतरे, वह नाले में। वहां कुछ बेली की लकड़ी है, वह वरिस वालों का थाच (=भेड़-बकरियों के रात्रि विश्राम का स्थल या गोठ) भी है। उधर लीद है न, लीद को आग लगाया हुआ है, आग मिला। वहां से फिर पत्थर उठा करके वह पहाड़ के ऊपर लाया, चूल्हा बनाने के लिए। फिर उधर चूल्हा बनाया।

तीसरे दिन पीछे से हमारे सारा आदमी आ गए।

उधर आए तो फिर वहां खाना बनाया। खाना क्या! नमकीन चाय बनाना, सत्तू घोलकर खाना, और कुछ नहीं। फिर हमारे पास वह बर्फ का सामान था, बिछाने को भी ओढ़ने को भी, उससे हम तेइस दिन उस बर्फ, ग्लेशियर के ऊपर रहे। *(रात्रि के समय ये लोग एकत्र होकर एक दूसरे से सट कर गोल होकर बैठ जाते थे और बारी-बारी से, जो सबसे अन्दर होते थे वे सब से बाहर की पंक्ति में जाते थे और जो पहले बाहर थे वे सब से अन्दर जा कर बैठते थे ताकि सब को गर्म रखा जा सके। इस तरह ये लोग उस जमा देने वाली ठंड में भी जीवित रह सके) - सं.।*

कैप्टन भीम चन्द

उस मैदान के ऊपर एक पहाड़ी है, वह पहाड़ी चोटी थोड़ा सूखा है, उस के ऊपर चढ़ना शुरू किया हमने। वहां से फिर पाकिस्तानी दुश्मन को देख सकते थे हम। तो, उधर पहुंचने में तीन दिन लग गए। तीसरे दिन पहुंचा तो वहां दुश्मनों का मोर्चा दिखाई दे रहा था, कोई बीस-पच्चीस आदमी सामान ले के वह जोत पार करके जा रहे हैं, बल्तियों के इलाके की तरफ। पहले तो वह बिल्कुल बादल हो कर नज़र ही नहीं आ रहा था, फिर मैंने जेब में हाथ डाला वह छिण्डे वाला लाल पैसा है न, वह एक मिला। मैंने भगवान से प्रार्थना करके, एक पत्थर को खड़ा करके उसको चढ़ाया। हमें यह धुन्ध को हटा दें ताकि हम दुश्मन का मोर्चा देख सकें। अच्छा, फिर भगवान की दया से आधा घंटे के अन्दर बिल्कुल साफ हो गया। इतना सच्चे दिल से प्रार्थना करने से यह है। फिर दुश्मन दिखाई दे रहा है। अब वरिस का एक आदमी हमारा गाईड था, रास्ता दिखाने वाला।

तेइस दिन के बाद उधर से फिर हम आगे चल पड़े। चलते-चलते, उधर एक फस्तन-फस्तन गांव है, एक नाले में। बस, बिल्कुल पहाड़ के ऊपर है। उनकी औरतें-लड़कियां घोड़े को नहीं पहचानते। बोलते, सींग होते हैं घोड़े को? उन्होंने देखा ही नहीं कभी। गाय, किसी ने छोटे में पहाड़ी रास्ते से पीठ में उठाकर ले गया, उससे बच्चे होकर, उसका औलाद है। इलाका बड़ा अच्छा है। पानी भी है, सब कुछ है, लेकिन इधर-उधर जाने का रास्ता नहीं है। बस फिर हम जाते-जाते वरिस में पहुंचे। वरिस वाले दुश्मन निकलने पर घर खाली छोड़ गए थे। रात को उधर पहुचा तो एक-दो घर में आग जलाया दिखाई दे रहा है।

देखा तो दुश्मन बैठा हुआ है उधर! फिर वह ज़ंस्कर का टशी था, उसने बोला, लेओ गा जी (=ठाकुर जी) यह मशीनगन पकड़ो, मैं राईफल ले कर जाता हूं। मैंने कहा, वे मत जाओ; लेकिन वह नहीं माना! फिर पता लग गया दुश्मन को, सब भाग गया आग बुझा करके। हमें एक भी नहीं मिला।

अब क्या करें? फिर वहां से, वह जो हमारे पास गाईड था, लम-पा (=पथ प्रदर्शक) उसने फिर पहाड़ के ऊपर चढ़ाया। सुबह सवेऽऽरे पहाड़ के ऊपर हम पहुंच गए, सारा ठीक-ठाक से। अब उधर धूप जल्दी आ जाता है। धूप आने पर दुश्मन उधर चलना फिरना शुरू कर दिया। ज्यूंऽऽ उधर से हमने फायर करना शुरू कर दिया। बस, वह लोग भागना शुरू कर दिया। कितना मार दिया!

बस फिर अब चाय बनाया, सत्तू खाया, फिर नीचे चलते रहे। फिर तीन मील तो नहीं, दो मील से भी कुछ ज़्यादा लम्बा वह एक पहाड़ है, उसके ऊपर दुश्मन का मोर्चा था। अब वह जो बल्ती बोगदङ को जाने का रास्ता था, वह हमारे रटांग (= रोहतांग दर्रा) की तरह गहरा था, फिर चढ़ाई था। हम एक-एक करके गए उधर।

गए तो, दुश्मन वहां से आना शुरू हो गया। पाकिस्तान ज़िंदाबाद बोल के बहुत, वह पहाड़ से आ रहे हैं। जगह-जगह धुआं निकल रहा है। उन्होंने ऐसा किया न, कि हमारे मोर्चे बहुत ज़्यादा हैं, जहां-जहां धुआं निकाल के रखा है, लेकिन थे थोड़े ही। अब हम नीचे उतरे, नीचे उतरे तो जहां सुबह फायर किया

था, वहां हथियार, राईफल, कोई बन्दूक 12 नम्बर का, कोई छतरी का डंडा है ना, उसका बन्दूक बना के रखा है बल्तियों ने, और वह दोल्लोग के पत्थार (=पत्थर जिसकी घड़ाई करके बर्तन बनाए जाते हैं) की गोली बनाके रखा है। फिर वह लिया हमने, अब चढ़ाई में हम ... वह लद्दाखी लोग न, जहां अंगुली टिकता है वहां भी चढ़ जाता है, परवाह ही नहीं करता है। मैंने कहा कि इस पहाड़ के ऊपर से फायर आएगा तो पता नहीं हम कितने मर जाएंगे। लेकिन पहाड़ के ऊपर पहुंचने तक एक भी नहीं है, सारे भाग गए वह लोग।

फिर आगे गए, आगे जाते-जाते देखा, नौ आदमी जा रहे हैं, दुश्मन। उनको तो खत्म कर दिया। फिर, उधर से भी ऊंचा, इधर से भी ऊंचा, बीच में नाला जैसा है, उधर पहुंचा तो परले तरफ पत्थर, गग्गड़ (=बड़े-छोटे पत्थरों की ढेरियों से युक्त भू-खण्ड) है, उसके बीच पाकिस्तानियों का मोर्चा था। हम उसके पास गए। बस, यह ज़ंस्कर का टशी था, बहुत हौंसले वाला लड़का था, वह जाकर दुश्मन के मोर्चे में घुस गया। वह पकड़ने लगे उसको, उसने जेब से एक रुपया घेपङ (= लाहुल में गांव शृशेन में स्थित देवता 'राजा घेपन') को मनाया और उधर छलांग लगाकर आ गया। फिर दुश्मन ने इतना फायर कर दिया! मेरे साथ एक लड़का था, उसके पट को गोली लग गया। पट से वह मांस काट दिया, खून निकलना शुरू हो गया। रोना शुरू कर दिया, मैंने कहा मत रो। अब क्या करें, शाम चार बजा हो गया, भूखे नंगे लड़ाई करते-करते। फिर हमने कहा, अब वापस चले जाएंगे। वह लोग मोर्चे में हैं, हम लोग नंगे इलाके में हैं, कुछ नहीं कर पाए। फिर नहीं मार सका दुश्मन को, हम वहां से चले आए।

होता-होता, रात को आठ बजे हम ऊपर पहाड़ के ऊपर, चोटी में मार्चा रखा हुआ था न, वहां पहुंचे। उधर पहुंचा तो सब - आधे लड़के छोड़ा हुआ था न मैंने, छांट के ले गया था होशियार-होशियार - वह रोने लगे हैं। ओ-हो दोस्ता मेरे, ज़िंदा आ गए! मैंने कहा, वे हरामियो, फौजी रोना नहीं। फौजी का काम है। फिर ऐसा करके रात काटा जी। बस, सुबह को एक फुट बर्फ पड़ गया। अब क्या करें, बड़ा मुश्किल हो गया। राशन कुछ नहीं। सत्तू के सिवाय कुछ भी नहीं था।

फिर दूसरे दिन दोबारा दुश्मन के मोर्चे की तरफ चले गए। वह सब भाग गए। कोई नहीं है। बन्दूक, राईफल भी मिला, टोपीदार भी, मज़ल लोडिंग भी मिला। वह दो-तीन लड़कों ने, बहुत ही लम्बा मज़ल वाला, पता नहीं कितना वह भरा हुआ था बारूद उसमें, पत्थर भरे हुए थे गोली के जगह, वह लाकर उन्होंने फायर कर दिया। फायर कर दिया तो वह टूट गया। बस, आदमी का नुकसान नहीं हुआ। कुछ राईफल मिला, कुछ प्राईवेट बन्दूकें मिला। उस सब को सफाई करके रखा।

जम्मू-कश्मीर का एक पलाटून था न, एक कैप्टन बहादुर सिंह था, उसको बोला तुम इधर मार्चा पकड़ो मैं पीछे जाके इन को ट्रेनिंग देना चाहता हूं। वह नहीं माना जी! फिर क्या करें, बड़ा मुश्किल हो गया। फिर कुछ दिन के बाद लेह से हुक्म आ गया, कर्नल पृथी चन्द का, कि तुम उधर मार्चा छोड़ के चले आओ, हम लोग जा रहे हैं, 'ज्ञा' में ले जाओ। अब ज्ञा कहां है हम को पता ही नहीं। गया ही नहीं न उधर से, हम तो कश्मीर होकर गए थे। फिर मैंने कहा कि देखो पृथी चन्द, हम राजपूत खानदान के हैं, दुश्मन को पीठ दिखा कर के हम नहीं जाते हैं। मैं तो आखिरी दम तक लड़ता जाऊंगा, हम नहीं आएंगे। फिर वह चिट्ठी भेज दिया। अब चिट्ठी भी ऐसा होता है न, लिफाफा में एक लाल कपड़ा बांध कर भेजना, फिर रात दिन चले जाते हैं। नहीं तो वायरलैस नहीं, कुछ भी नहीं था। फिर उनको वह चिट्ठी पढ़ करके होश आया, ओह्-हो, इस आदमी ने इतने हौंसले से बात किया हुआ है, यह तो गलत है, हम भी डट जाते हैं! चलो, दोबारा मोर्चा पकड़ेंगे लेह में। बस, लेह वाले सब भाग गए। हम बैठे रहे, तो दोबारा चिट्ठी आया। अब हम इधर मोर्चा पकड़ लिया है, अब तुम उधर मत छोड़ो।

फिर मैंने क्या किया हुआ था, पैंतीस ऊंट वाले यारकन्दी थे, उनको रोका हुआ था। फिर उधर करलोन लामा सोहुकार है, लोन-पो सोहुकार है, गोपा लमरदार वह सोहुकार है, उनको बोला राशन कुछ पैसा, तुम लोग लाओ हम यहां से चीन को चले जाएंगे। वैसे उधर दुश्मन ने रास्ता रोक लेना है। वह मन्जूर थे जाने के लिए, फिर बाद में कोई नक्शा बदल गया।

मेरे को हुक्म मिला कि तुम वह मोर्चा छोड़ के

लेह में चले आओ। फिर उधर छोड़ के लेह में आया। लेह में आ कर के हम फ्यङ में गए। फ्यङ में कोई चार मील के फासले पर दुश्मन पहुंच चुके थे। वहां एक-एक कप चाय पिया।

अब उधर पहुंचने पर क्या हुआ, यह मेरे को बता दिया कि तुम्हारी पत्नी की मृत्यु हो गई है। अब देखो, ऐसे मौके पर मेरे पर पहाड़ गिरने के बराबर हुआ। क्या करें, क्या, कैसे करना! पृथी चन्द को बोला, मैने घर जाना है। फिर जल्दी आ जाऊंगा। नहीं माना। और लोकल लोग भी आया, मत जाओ तुम घर को। अब क्या करना! फिर मेरे को एक दम आ गया, कि नहीं जाऊंगा!

बस, फिर वहां से, मेजर हरी चन्द था, वह आया। दोनों ने कप-कप चाय पिया, फिर पहाड़ के ऊपर चढ़े। हम ने उधर से देखा, दुश्मन फ्यङ वालों के दो याक पकड़ कर ले जा रहे हैं। हम ने गोली चला कर के दो को तो मार दिया, याक भी छोड़ दिया। फिर उधर से जा कर, थोड़ा ऊपर जा कर मोर्चा पकड़ा। मोर्चा पकड़ा, तो वहां दुश्मन ऊपर था, हम नीचे। अब उन का गोली बहुत ही आ रहा था। बड़ा मुश्किल हो गया। फिर क्या किया हमने, राईफल के ऊपर लोहे का टोपी, ब्रण्डी (= ओवर कोट) पहना कर मोर्चे से निकाला ना, वह फायर किया तो उस को गिरा देना। फिर उधर से एक निकालना, फिर गिराना। मतलब क्या, गोली को खत्म करना पाकिस्तानियों का। एक दो दिन तक ऐसा करते रहे। फिर हमने कहा, नहीं।

एक लड़का, सिख लड़का था, स्टेट का फौजी था वह, तो उसको संतरी लगाया हुआ था। मैंने कहा, खड़ा नहीं होना, गोली आ रहा है। वह सिख लड़का, बेवकूफ़ है न, खड़ा हो गया। छाती में पंद्रह गोली लग गया, बस मर गया। घसीट कर ले आए नीचे। एक ने कहा इस के पास पैसा है। अब उन के साथ एक हवलदार था, पैसा उस ने निकाल दिया है। जै मारा उस हवलदार को, खूब!

दूसरे दिन रात को हम दुश्मन के मोर्चे के ऊपर चक्कर लगा कर चले गए। सुबह-सवेऽऽऽरे दुश्मन के मोर्चे के ऊपर पहुंच गया। बर्फ ही बर्फ था। ऊपर पहुंचे थे, मैं, वह ज़ंस्कर का टशी, एक लड़का और। उधर वह काला-काला नज़र आ रहा है, थोड़ा बादल भी चल रहा है। उतनी देर में उस ने आवाज़ दे दिया, येऽऽऽ रल्लीऽऽऽ! बोल कर। फिर उन का पंद्रह आदमी था मोर्चे में। वह टशी जा कर के बोला, तुम राईफल तो पकड़ो, मैं उस को ले आऊंगा। उस ने ऐसा बन्दूक किया (टशी की ओर बंदूक ताना दुश्मन ने), तो इस ने टांग पकड़ कर घसीट कर के ले आया। बोलता, यह तुम पकड़ो, मैं और ले आऊंगा। मैंने कहा, मत ले आओ, अभी हम दो ही आदमी तो हैं। तो बाकी पीछे से आ रहे थे, इतनी देर में पीछे से भी आ गए। वह सारा हम ने सुबह सवेरे ही खत्म कर दिया। एक ज़िन्दा पकड़ लिया। उस को फिर रखा, उस से पूछा कितना आदमी है - इतना है। नाम वगैरा पूछा, वह सब पूछा, फिर मोर्चा कहां-कहां है, कैसा-कैसा है, उसने बता दिया। फिर दो कुली के साथ वह कैदी हमने नीचे हैडक्वार्टर को भेज दिया।

हम आगे बढ़े। दुश्मन की तरफ सूखा था। उधर से जा कर के, अब नीचे हमारा कुछ आदमी छोड़ा हुआ था न, पहले मोर्चे में, वहां उन का फायरिंग जारी था। उधर भी छेड़ करते रहे, न! उधर ही ध्यान था दुश्मन का। हम पीछे से पहुंचे तो, जै उधर साठ मार दिया हम ने। फिर भागा जी दुश्मन! वहां से भागा, बस कोई पत्थर के बीच टांग फंस कर के, उन को तो गोली नहीं चलाया, पत्थर से मारा।

वह सब हो गया, फिर हम नीचे उतरे तो फिर एक ने बोला कि एक आदमी टांग हिला रहा है - वह पत्थर के नीचे। वह मिलीशिया का लड़का था। उस को गोली लग कर खून ही खून निकल गया। आठ दिन हो गया, नहीं मरा हुआ है। वह छु:-छु: (पानी-पानी) बोलता था। फिर बर्फ गला कर के, सत्तू घोल के उसको खिलाया। वह खड़ा हो गया। उस को हमने हैडक्वार्टर में भेज दिया, बाद में वह ज़िन्दा हो गया। हड्डी को चोट नहीं था, मांस में लगा हुआ था, खून ही निकला था। वैसे वह सूख गया था खून निकल के।

फिर हरी चन्द के साथ ही हम ऊपर गए। अब उन को पता लग गया कि इन लोगों ने हमारा मोर्चा भी देख लिया है। हम लोग ऊपर चढ़ने लगे तो वे लोग भी ऊपर जाने लगे। फिर यह कुली लोग जो हैं न बेवकूफ़, वह लोग भी दुश्मन की तरफ चले जाते हैं। मैंने कहा, उन की तरफ मत जाना, वह जुंएं देखने के लिए चले जाते हैं न! हम ने उधर से उन को रोका।

सुबह सवेरे ही, आठ बजे, हम ने दुश्मन को नीचे से ऊपर की तरफ हमला कर दिया। वे ऊपर थे, हमारे पांच-छह जवान ज़ख्मी हो गए। हम ऊपर नहीं पहुंच सके। हम वहां से आ कर के छुप कर के बैठ गए। अब वे लोग आ गए इधर - आदमी मारा है तो राईफल वगैरा होगा, वह लेने के लिए। छह आदमी आए वे, छह का छह हमने मार दिया ब्रेनगन से - मशीनगन से। फिर हम वह मोर्चा छोड़ के नीचे आए हैडक्वार्टर में।

अब देखो, खाना नहीं, कुछ नहीं। खाना दो आदमी ला रहे थे हैडक्वार्टर से। वह पाकिस्तानियों ने आवाज़ दे कर, बोलता, इधर है हिन्दुस्तान का मोर्चा, इधर ले आओ। हमारी तरफ चढ़ाई था न, इधर नहीं आए। कुलियों ने रोटी-खाना उधर ले गया, हरामियों ने! फिर नीचे हैडक्वार्टर गए, उधर जा कर हरी चन्द को बोला, यार यह तो बड़ा अजीब बात है। यहां दुश्मन तो एकदम खत्म कर सकता है हमको। रात को आ कर के, नीचे से हमला करने का स्कीम बनाया। हम रात को चले गए, मैंने कहा, मेजर साब, तरतीब बताओ। वह बोला, यार, यह लुटेरों के साथ क्या लड़ना है। वह बड़ा घमण्ड पर था। तो गए, मोर्चे के नज़दीक हम पहुंच गए। पीछे देखा तो हमारे जवान कोई नहीं हैं! कोई उधर को चले गए, कोई इधर को चले गए। उन का, दुश्मन का मोर्चे में बातचीत करना हम सुन रहे थे। हम वापस चले गए। मैंने कहा, कल तरतीब मैं बनाऊंगा। दूसरे दिन फिर मैं तरतीब कर के, चले गए हम। जा कर के, वह एक नाला था। उस नाले के पार दुश्मन की तरफ मोर्चों पर राशन, कपड़ा वगैरा पहुंचाते थे, तो हम उस नाले से पार दुश्मन की तरफ पहाड़ के ऊपर ...., हौंसला भी बढ़ गया। फिर वह ज़ेमो में दुश्मन का कर्नल था। वह क्या कहते हैं, ऊपर मोर्चा था, तो उस पर हमला करने के लिए तैयार हो गए हम। हरी चन्द बोला, उधर हमला करना। मैंने कहा, नहीं हो सकता यह। उधर हमला करोगे तो वह ऊपर वाला दुश्मन आ के खत्म कर देगा। हम नहीं निकल सकते। बोलता यार, देख ....! हमारा झगड़ा हो गया। मैंने कहा, तू उस मोर्चे को फतह करेगा तो मेरे को गोली मार - अभी जान से उड़ा दो। उस ने जाने का किया, मैं चला आया अपने क्वार्टर पर। थ्री-इन्च मोर्टार, वायरलैस वगैरा, सारा साथ था। बस, अब ऊपर से वैसा ही हुआ। दुश्मन आया। जूंऽऽऽ उन पर हमला हुआ! ब्रेनगन भी बन्द हो गया, मशीनगन भी बन्द हो गया - भागना शरू हो गया। थ्री-इन्च मोर्टार, सारा मोल्ड कर के छोड़ आए, वायरलैस छोड़ आए। गोरखा लोग लाल का लाल, खून का खून हो कर आ गए। फिर मेजर हरी चन्द ने मेरे पैर पकड़ा, बोलता तेरे स्कीम के बगैर मैं नहीं चल सकता, बड़ा मुश्किल है। बड़ा नुकसान हो गया उन गोरखा लोग का। हम दोबारा हमला नहीं कर सके। अब मुझे फिर नुबरा में जाने का हुकुम मिला।

नुबरा गया, अभी नुबरा को कहां जाना, यह अल्ची में दुश्मन था। उन पर हमला करने के लिए गया। कोई साठ-सत्तर के करीब गोरखा भी थे, मिलीशिया के भी थे। उन को साथ ले के, उधर से रुम्बा, कोई रुम्बा-ला, कोई मार्का, फिर वह चिलिङ सुमदो में पहुंचे। उधर जा कर के दूरबीन से देखा तो दुश्मन है। ज़ंस्कर से एक दरिया जाता है, उस के परली तरफ। ओरले तरफ हैं हम, परले तरफ दुश्मन। अब एक मेजर था, माथुर-माथुर, उस के साथ। वह देहली का था। कोई मील से भी ज़्यादा दूर है, दूरबीन से देख रहा है। कांप रहा है डर के मारे। दुश्मन देखा ही नहीं था न वह लोग कभी। पढ़ा-लिखा तो है, पर हौंसला नहीं। मैंने कहा, हम करेंगे!

दूसरे दिन हमने क्या किया, सारे ने जेब में मटर भून कर के डाला। एक एक कप कन्धे में रखा और दस-बारह गैलन, यह रम का बोतल ले के चले गए। फिर वह ज़ंस्कर के दरिया पर पुल नहीं है। वह 'बीप' बोलते हैं, तीन दार (= लकड़ी के शहतीर) बांध करके रस्सी से, दोनों सिरों पर रस्सी बांधा हुआ है, उसके ऊपर पांच, छह-छह आदमी बैठना। उधर उस को खींचना, फिर वापस आना। वैसा कर के हम सब से पहले निकल गए। मैंने कहा, हम गांव में जाएंगे, तुम लोग आ जाना। तो निकल कर के गए चार-पांच आदमी। जा कर के, अल्ची में हिमि: गोनपे का एक छोटा सा गोनपा है, उधर गए। वह कोमञेर (=प्रबन्धक) तो बेहोश हो गया, दुश्मन आया सोच के। हम ने कहा, वे अपना आदमी है, मत डरो। बड़ाऽऽऽ मुश्किल से उस को होश आया। हम ने कहा कि गांव में पता करो कि हम लोग आ गए, कुत्तों को बन्द करो। वह जा कर के इत्तला दिया। गांव वाले आ गए। कोई बोतल ले कर, फिर कुछ

देर तक बैठे। फिर एक नाला है, वहां से हमने दुश्मन के ऊपर चलना शुरू कर दिया।

चलता, चलता, चलता, सुबह पेऽऽऽहलेऽ, पौ फटने पर हम जोत में पहुंच गए। दुश्मन के मोर्चे से ऊपर पहुंच गए। अब हम को हौंसला आ गया। मैंने लड़कों को पूछा, क्या करना भई? हमला करना कि पीछे बैठ कर हथियार जमा करना? नहीं माना, हमला करना है। फिर हम हमला करते-करते मोर्चों पर गए - खाली मोर्चा! नीचे दूसरा मोर्चा आया, वह भी खाली! अब क्या करें? इतनाऽऽऽ, सारी रात बिना सोए, नींद के आए, फिर जोत के ऊपर बैठे, सोचने लगे अब क्या करिए, कहां चले गए!

फिर एक आदमी परे से आ रहा था, हम को देखा तो भागना शुरू हो गया। दो-तीन आदमी दौड़ कर गए, उस को पकड़ कर ले आए। यह अपना आदमी था, दुश्मन नहीं था। बस, वह बेहोश हो गया। फिर बाद में उस ने बताया कि रात को ही बारह बजे चले गए वह। कहां? बस, पाकिस्तान की तरफ। वहां से जा कर के एक गोनपा है - क्या कहते हैं, छोटा सुमदो, कुछ ऐसा बोलते हैं। वह भी हिमि: गोनपा का गोनपा है। वहां छोगस् फुल्चिस (=बौद्ध देवी-देवताओं को नैवैद्य अर्पित करना) कर रहे हैं। अब हम को भूख लगा हुआ था। लामाओं को बोला छोगस् (=नैवैद्य-प्रसाद) देओ। बोला, नहीं। खत्म नहीं हुआ अभी तो (पूजा-पाठ)। हम ने कहा, ठहर तुम! फिर दिया उन्होंने जल्दी-जल्दी! ह:ह:ह: (ठहाका लगाते हुए)। फिर एक अच्छा घर (=अपेक्षाकृत अमीर) वाला था। उस ने सत्तू, लस्सी, छङ (=जौ से निर्मित लुगड़ी) और चाय बना कर के दिया। वह खाया-पिया, फिर वहां से चल पड़े।

आगे जाकर के, दुश्मन तो निकल गया। छह घण्टा पहले निकल गया, बोलता। रात हो गया, उधर बैठा। एक है... सस्पो, सस्पो नहीं, अल्ची का एक लद्दाखी था, उन पाकिस्तानियों को मदद करता था। उन्होंने बताया कि इस ने किया पाकिस्तानियों को मदद। उस को कोई छह-आठ बकरा दे कर के गए। बकरा भी गांव से लूट कर के लाया हुआ, ना! फिर, ओऽहो, उस ने बाल भी रखा हुआ था। रात को उस गांव में ठहरे। ज्यों मारा न उसको; वह क्या नाम, दिसम्बर का महीना था, इतना ठण्ड था न! सिर के ऊपर ठण्डा पानी डालना, पीठ पर डण्डा मारना। बोलता, जान से खत्म करो! हम ने बोला, जान से खत्म नहीं करना, तुमने दुश्मन को मदद किया है, इसका नतीजा तेरे को बाद में मिलेगा। जान से नहीं मारा, बस सारी रात नंगा कर के रखा, पानी ड़ालते गए। वह बकरा काटा था न, कुछ तो खाया हमने मीट, और सुबह हम वहां से चल पड़े।

फिर हिन्जु...हिन्जु-ला है एक, वह ला (=जोत) क्रॉस करके गए। बर्फ पड़ गया हुआ था थोड़ा-थोड़ा। वहां से गए तो आगे जा के हिन्जु गांव वाले हम को आते देखा तो वह जंगल में भागना शुरू हो गए। हम ने दो आदमी भेजा, हम अपना आदमी है, दुश्मन नहीं है। फिर जा कर के एक सत्तर साल का बूढ़ा है, उसको बताया, हम हिन्दुस्तान के आदमी हैं, लाहुल के हैं, गरजा के, तो तुम लोग मत घबराओ। फिर तो उस

ने गले में चादर फंसाया, 'ञीमा चिग लिङी शरङ शा, यङ चि शर सोङ ...' बोल कर नाचने लगा (='एक सूरज तो पहले ही उदित हुआ था, एक और सूरज उदित हो गया है')। बड़ा खुश हो गया। उस ने आवाज़ दिया, यह तो अपना आदमी है, आओ! फिर उन्होंने, गांव वालों ने, एक बकरा दिया हमको, राशन नहीं था न! वह खाया हमने, बस नमक है ही नहीं उन के पास। वह पाकिस्तानियों ने लूट के ले गया।

फिर वहां से चलते-चलते, आगे फिर हिमि: गोनपा का एक गोनपा है, उधर जा कर खाना खाया। वहां से लम:युरु पहुंचना था। उधर हमने चिट्ठी भेजा हुआ था, पाकिस्तानी आए हुए, उन को रोको, हम आ रहे हैं। फिर हम स्कीम बना कर के उधर जा रहे थे। बाद में, वहां लम:युरु की तरफ से पचास-एक आदमी हम लोग का स्वागत के लिए आए हुए थे। हम ने कहा, स्वागत क्या करना, दुश्मन कहां है? बोलता कि खाली कर के चले गए। फिर वहां से लम:युरु गए। लम:युरु में जा कर के फिर वह लोग (= दुश्मन) खल:चि़ में गए। खल:चि़ से आगे पाकिस्तान की ओर भागना शुरू किया। हम वहां से बोद-खर-बु, मुलबेक आए, फिर करगिल।

करगिल में ज़ोजीला क्रॉस कर के एक ब्रिगेडियर आए हुए थे। उस के साथ उधर थोड़ा ताश खेला, चाय पिया। वहां से हम 'धा-हनु', एक तिङे-सङ्पो नाला है, उस नाले की तरफ चले गए। उधर से दुश्मन आ रहा था। तो एक बल्ली (=बल्तिस्तान का निवासी) बड़ा, ओ क्या नाम, दौड़ कर के आ रहा था। कहां जा रहा है? कुछ नहीं बोला। ...पकड़ो, मारो इसको। फिर उसने बोला दुश्मन (=हिन्दुस्तानी फौजी) आ रहा है। उस का पता के लिए मैं आगे जा रहा हूं। (गाली)...! खत्म कर दो इसको।

खत्म करके आगे गए तो नीचे दिखाई दिया, बैठ कर कोई सिगरेट पी रहा, कोई चलने को तैयार, दुश्मन! झैऽऽऽ! सिर के ऊपर गोली चलाया, तो पता नहीं कितना मार दिया, लाश गिना नहीं। बस, भागना शुरू हो गए जो बचे थे। फिर वहां से नीचे दरिया के किनारे को चले गए हम। वहां से वापस आहिस्ता-आहिस्ता लद्दाख को चले आए। लद्दाख में पहुंचा; फिर हुकुम मिला नुबरा में जाओ। दिसम्बर का महीना में ज़ोजीला - ज़ोजिला नहीं - क्या था वह - खरदुङला! खरदुङला क्रॉस कर के चले गए। इतनी सर्दी थी! याक के ऊपर सवार था। याक के नाक में इतना (अंगुली का संकेत करते हुए) बर्फ जमा हुआ था। ओऽऽऽ, फिर जा कर के, बल्तिस्तान में बोगदङ में पहुंचे। तो फिर वहां मैंने 22000 फुट बुलन्दी पर पहाड़ को क्रॉस कर के हमला किया। 23 दिसम्बर को हमला किया, पांच दिन भूखे रहे। 27 को हमने फ़तह कर दिया। तब फिर मोर्चे पर 31 दिसम्बर को सीज़-फायर (युद्ध-विराम) का हुकुम आ गया। फिर लड़ाई खत्म! जयहिन्द!!

(इस अंतिम युद्ध के बारे बताते हुए एक अन्य अवसर पर स्व. भीम चन्द जी ने अपने पुत्र रणबीर को बताया था कि इस चोटी पर चढ़ाई से पूर्व उन्होंने फिर घेपङ से रक्षा एवं विजय के लिए प्रार्थना की थी। चमत्कार ही था कि उस चोटी पर टंगरोलों (आईबैक्स) का एक झुण्ड अचानक इन को दिखाई दिया जो दुश्मन के मोर्चे को घेरते हुए दूसरी ओर से ऊपर की तरफ चला गया। प्रकृति के संकेतों को समझने में भीम चन्द जी कभी नहीं चूके। उन्होंने उसी टंगरोलों के रास्ते को पकड़ कर ऊपर को चढ़ना शुरू किया और ऊपर चोटी तक पहुंतने में सफल हो गए और दुश्मन के मोर्चे को तबाह कर फतह हासिल की। इस विजय पर उन्हें दूसरी बार वीर-चक्र से अलंकृत किया गया।

दिसम्बर माह के भयंकर बर्फानी मौसम में इस चोटी पर चढ़ना एक असंभव सा कार्य था जो उन्होंने संभव कर दिखाया। वीरों के सामने उत्तुंग शिखर भी नत हो जाते हैं।) (सं.)

सौजन्य - श्री रणबीर ठाकुर;
लिप्यन्तरण - सतीश कुमार लोप्पा

....पृष्ठ 26 का शेष भाग

राशन, गोला-बारूद व हथियार के, मेजर खुशाल चन्द ने छोटी सी टुकड़ी का बहादुरी तथा कुशलतापूर्वक नेतृत्व किया तथा साहस एवं शौर्य का व्यक्तिगत उदाहरण देते हुए उन्होंने अपना कार्य सफलतापूर्वक पूरा किया। इस प्रकार उन्होंने भारतीय सेना की उच्च परम्परा को बरकरार रखते हुए अपने सहकर्मियों के लिए सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया।"

दुर्भाग्यवश लाहुल के इस वीर सपूत की जीवन यात्रा समय से पहले ही समाप्त हो गई। 1958 में एक दु:खद विमान दुर्घटना में वे अपने पीछे पत्नी तथा तीन बच्चों को छोड़ कर दिवंगत हुए।

(हिन्दी अनुवाद - अजेय)

फर्जङ हिल पर कब्ज़ा

-तोबगे राम

सन् 1940 में मैं फौज में भर्ती हुआ था। सत्रह-साढ़े सत्रह साल का था, बिल्कुल लड़का ही सोचो। बड़ा शौक हुआ करता था कि फौज की ज़िन्दगी कैसी होती है। इस वास्ते मैं कहा चलो फौज भी देखते हैं। अंग्रेज़ों का राज था। कुदरती, भर्ती करने के लिए आए हुए थे वह, मनाली में। हो गया भर्ती। हम लोग कोई 30-40 आदमी भर्ती हुए थे, एक ही दिन में। फिर जालन्धर में ट्रैनिंग के लिए गया। वहां अग्रज़ों ने मेरे को दूध लगाया हुआ था, आधा किलो सुबह शाम, 18 साल पूरा होने तक। उसके बाद मेरा ट्रैनिंग शुरू हुआ।

जब दूसरा आलमी जंग शुरू हुआ था तो एक पेरा शूट बटालियन एम.एम.जी. खड़ा हुआ था। उसमें भी मेरा नाम आ गया। थोड़ा वक्त उसमें भी रहा। बर्मा में लड़ाई किया। उस लड़ाई में जापानी थे, इटली थे, जर्मन थे, उनके साथ लड़े। आज़ाद हिन्द फौज वाले भी पहुंच गए थे वहां। वह लोग वार-पार से आवाज़ देते थे, 'वे हिन्दुस्तानियों हम हैं, हम तो आज़ादी के लिए लड़ रहे हैं, हम को क्यों गोली मारते हो।' तो हम लड़ाई बन्दकर देते थे। हम बोलते थे, यह तो हमारी आजादी के लिए लड़ रहे हैं इनको क्यों गोली मारना। आज़ादी के लिए कौन नहीं करता है। फिर हम ढीला कर देते थे। सन् 44 में जब पीछे आए तो हमारा वह एम.एम.जी. तो पूरा खत्म हो गया था वहीं, तो बचे हुए लोग अपने-अपने यूनिट को वापस आ गए।

सन् 48 में जब पाकिस्तान ने कश्मीर में हमला कर दिया तो हमारा यूनिट 2/डोगरा, उड़ी मे लड़ रहा था। फिर हम लोग फरवरी महीनें में ज़ोजीला पार करके लेह को गए। तब तक कभी भी किसी ने इन महीनों में ज़ोजीला पार नहीं किया था। वह हमारा एक रिकार्ड था। क. पृथ्वी चन्द थे खुशहाल चन्द, भीम चन्द और चार एक सिपाही और थे लाहुल के। हमारे साथ एक चीफ़ इन्जीनियर सोनम नोरबू थे और कुछ सिपाही लद्दाखी भी थे। तो लेह पहुंचने पर हमने वहां एक हवाई अड्डा तैयार किया। 15-20 दिन में वह तैयार कर दिया। फिर हम लोगों ने लद्दाखियों को भर्ती करना शुरू कर दिया दिया। दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह, बीस-बीस दिन हमने उनको ट्रेनिंग दिया। उसके बाद पाकिस्तानियों का ज़्यादा जोर पड़ गया। मैं कैप्टन भीम चन्द के साथ नुबरा गया हुआ था। मैं उसके कमान में काम करता था, जो कुछ वह बोलेगा, मैंने करना। हम दो ही तो थे वहां, बाकी वह भर्ती किए हुए लद्दाखी। वह बड़ा टेक्टिक्स (=रणनीतिज्ञ) वाला आदमी था भीम चन्द। उसने क्या करना रात को ही चलना, एक दोनों तरफ मुंह वाला कुदाली की तरह होता है, उसके साथ पहाड़ खोद-खोद कर चढ़ जाना उसने ऊपर। मोन्टेनियरिंग की तरह समझो। पूरा मोन्टेनियर ही था वह। दुश्मन रह जाना नीचे, उसने ऊपर चढ़ जाना। सुबह थोड़ा-थोड़ा रोशनी होने लगे, दे गोली मारना शुरू कर देना और भगा देना उनको। बस, जंगली बकरी की तरह दौड़ा देता था।

तो उस वक्त नुबरा में पाकिस्तान का उतना ज़ोर नहीं था। लेह में ज़्यादा ज़ोर पड़ गया था। हमें ऑर्डर मिला दो कि नुबरा छोड़ कर लेह में आ जाओ। फिर हम वापस लेह में आ गए। लेह में आने पर कर्नल पृथी चन्द ने के. भीम चन्द और मेरे को ऑर्डर दिया कि इन जवानों को लेकर, लेह से तीन-चार मील पर है दो गांव फ्यङ और तरू, वहां चले जाओ। तो दुश्मन जो आया हुआ था, वह तरू के सीधा ऊपर एक पहाड़ था कोई 17270 फुट ऊंचा, उसके ऊपर। उस पहाड़ का नाम सोन्ड्रो:-सोन्ड्रो: बोलते थे लद्दाखी लोग। (=अधिकारिक नाम फर्जङ हिल) वहां से उन्होंने गोली मारना शुरू कर दिया लेह को। लेकिन गोली नहीं पहुंचता था, पहुंच भी जाता है तो कारगर नहीं होता था। उस वक्त सब लोगों ने यही सोचा कि अब लेह नहीं बचेगा। खज़ाना भी ले के चले गए थे। फिर एक थे मेजर हरी चन्द 2/8 गोरखा राईफल्ज़ के। वह हमारा इन्चार्ज था। उसका कोई एक कम्पनी पहुंचा हुआ था लेह में। क. पृथी चन्द लेह में रहते थे। वह बेस कमांडर थे। पीछे, वह हमारा बन्दोबस्त करते थे। राशन-रूशन, ऐसा-वैसा, लेण-देणा, सब कुछ। बन्दोवस्त बहुत ज़बरज़स्त किया इसने। जहां भी जरूरत पड़ा, बड़ा अच्छा बन्दोवस्त किया। समझो कि अगर लाहुल के आदमी उस वक्त लेह में नहीं पहुंचे होते तो ऐसा बन्दोवस्त करना बहुत ही मुश्किल था।

तो हरी चन्द हमारे इन्चार्ज थे। शाम को समझो कोई पांच एक बजे मीटिंग किया, तो उसने कहा कि इस पहाड़ को लेना है क्या ढंग करें। सलाह मशवरा किया सारे ने। तो मैंने कहा भई, इस पहाड़ को लेने के लिए रकी करना पड़ेगा। रकी पैट्रोल यानि देखभाल करना कि कहां से रास्ता है, दुश्मन का कितना आदमी

है, वह सब पता लेना। उस पहाड़ के बीच में एक नाला था। नाले के पार दुश्मन का हैडक्वार्टर था। नाले के वार पता नहीं कोई 50-60 आदमी भेजा होगा उस पहाड़ के ऊपर। उसका देखभाल करने के लिए कि इस पहाड़ के ऊपर कहीं हिन्दुस्तानी न चढ़ जाएं। तब तो हमें पीछे हटना पड़ेगा। लेकिन उस वक्त हमें भी पता नहीं था उसके ऊपर क्या चीज़ है। कितना एक आदमी है, कितना नहीं है। के. भीम चन्द ने मेरे को कहा, क्या ख्याल है, तू कर लेगा इसको? तो हां करना ही पड़ा मेरे को। और तो कोई तैयार नहीं हो रहा था वहां। जम्मू राजा का कुछ फोर्स था, उनका कुछ हिम्मत नहीं चला। उसके बाद गोरखा राईफल्ज़ के भी थोड़े आदमी थे, वह लोग भी ढीला हो गए। कि भई रकी नहीं किया, कुछ नहीं किया। अब पुराना आदमी मैं ही था, मेरे पास ही थे चालीस-पच्चास आदमी जो हमने भर्ती करके रखा था। लाहुल के कुछ आदमी भी थे। एक तो दालंग का था, राम चन्द-राम चन्द बोलते थे। एक दो आदमी और थे, अब याद नहीं रहा। एक हमारे रेगुलर्ज़ आर्मी का था टशी-टशी, ज़ंखर का। बड़ा जोशीला आदमी था, गन-गुन उठाने के लिए तो एक दम उठ जाता था। कुदरती मेरे को खयाल आ गया कि किसी भी ढंग से हो, इसको हमने करना ही है। देखते हैं, भला क्या-क्या होता है। उस टाईम डर-डुर बिल्कुल लगता नहीं था। मैं तो इतना खुश हुआ उस दिन। तो शाम को मेजर हरी चन्द ने मेरे को कहा कि, मेरा असली नाम तो तोबगे है, वह मेरे को तोबदन करके पुकारते थे, तोबदन, क्या खयाल है? मैं कहा, जी देखते हैं। रकी-रुकी कुछ भी नहीं, बस सीधा मीटिंग हुआ। भीम चन्द ने मेरे को कहा, तोबगे, तू हो जा तैयार। मैं कहा, मैं होता हूं तैयार, चलो। जितने आदमी थे मेरे पास, सब को इकट्ठा किया मैंने शाम को। उनको थोड़ा सा ट्रैनिंग दिया। ट्रैनिंग कैसा, ऐसे ज़बानी-ज़बानी बोला। मैंने बोला, आधा पहाड़ तक तो हमारे को कोई खतरा नहीं, उसके बाद शायद हम को खतरा हो जाएगा। क्योंकि आधा पहाड़ तक तो वह नीचे नहीं आएंगे, ऊपर ही रहेंगे। आधे के बाद अगर ऊपर से गोली चलना शुरू हो गया तो हम 'बौण्ड-बाई-बौण्ड' चलेंगे। मतलब, ऐसा होता है कि पांच-दस आदमी को आगे भेज देना, वह ज़मीन में पोज़ीशन ले लेंगे, पोज़ीशन लेने के बाद जिस जगह से गोली आ रहा है, वहीं उन्होंने गोली मारना है, ताकि उनके गोली का जवाब गोली दे और उनका सिर हमेशा नीचे रहे। तो पीछे जो आदमी होते हैं उनको आगे टपा देना, वह फिर पोज़ीशन ले लेंगे, वह गोली मारेंगे, तो पीछे वाले आगे-आगे जाएंगे। इस तरह गोली मारते-मारते आगे बढ़ना। फिर मैंने उनको बोला कि अगर गोली आ गया, तो पहले बिल्कुल कोई जवाब नहीं देना है। ताकि हमारे पोज़ीशन का उनको पता न लग जाए। चुप-चाप बैठ जाना, बस। फिर मैं खुद ही तुम्हारे को बता दूंगा कि क्या करना है। आधे पहाड़ तक तो हम मज़े के साथ चढ़ गए ऊपर को। ऊपर वह पहाड़ ऐसा था, कि इस पर चढ़ जाओ, यहां एक और चोटी नज़र आ रहा है, उस पर चढ़ जाओ, आगे एक और चोटी नज़र आ रहा, उस पर चढ़ जाओ, एक और चोटी नज़र आ रहा है। इस तरह था वह। तो निचला एक चोटी पर तो पहुंच गए हम लोग। वहां तो कोई नज़र नहीं आया। अब इस पहाड़ का भी कोई पता नहीं था हमें, नक्शा हमारे पास था नहीं। बाद में जो 2/8 गोरखा का कम्पनी आया, उनके

सिपाही तोबगे राम

पास नक्शा था, तब पता चला कि भई इसकी बुलन्दी तो 17270 फुट है।

उस निचले पहाड़ तक पहुंचे हम, वहां हमने पोज़ीशन ले लिया। बैठ गए चुप-चाप। तो मैंने बोला,

यहां तो हमें कोई खतरा नहीं है। इसके ऊपर एक और पहाड़ नज़र आ रहा है, शायद इसके ऊपर ही होंग वह, और था भी उसके ऊपर उनका पोज़ीशन। जिस जगह हमने पोज़ीशन लिया था, वहां से समझो कोई आधा किलोमीटर ऊपर था वह। तो शाम हो गया। यह 29 जुलाई, सन 1948 की बात है। वह सिपाहियों को पूछा, मैंने बोला भई, तुम लोग इस पहाड़ का तो पूरा वाकिफ हैं? क्योंकि गर्मियों में जो गाए वगैरा है उनको पहुंचाने ऊपर आते हैं। वह थाच की तरह था, जिसके ऊपर हम बैठे थे तो मैंने कहा, पानी कहां मिलेगा? बोला, कोई तीन-चार सौ गज़ पर है। मैं कहा, फिर तो नज़दीक है। और जगह पानी है? बोला, नहीं है। यही है। तो मैंने कहा, दुश्मन भी यही पानी 'खाएगा'। मैं कहा, आज रात भून दूंगा सालों को। बैठे रहे चुप-चाप। ऊपर वाले सालों को भी पता नहीं चला कि यहां चढ़ गए हम लोग। शाम को कोई सात-आठ बज गया। रात हो गया। तो मैंने क्या किया, पांच-छह आदमी को तैयार कर दिया। एमनिशन का डब्बा था एक, उसको खाली किया, एक सिपाही को बोला इसको ले चलो, पानी ले आएंगे। वहां गए तो अन्दाज़ा लगाया हमने कि पानी यही 'खा' रहे हैं वह। वहां जो चश्मा था उसके ऊपर ऐसा खड़ा ढलान था, ऊपर बिल्कुल बर्फ ही था, उस पर रास्ता निकला हुआ था। मैंने सोचा पानी तो ले जाते हैं, चाहे दिन को ले जाते हों या रात को। अगर रात को ले जाते हैं तो ज़रूर आएंगे। यहां तो भून दूंगा मैं उनको। दिन को आएंगे तो नहीं भूनेंगे। बैठे रहे चुप-चाप। तीन आदमी आए रात को। दो सिपाही, एक कुली, डालडे का जो टीन होता है वह लेकर। एक सिपाही तो बैठ गया ऊपर ढलान पर। एक सिपाही बिल्कुल नज़दीक आ गया। फिर मैंने इनको बोला हुआ था, देखो, सबकी नज़र होना चाहिए उस चश्मे के ऊपर। जिस वक्त मैं ज़ोर से ताली बजा दूंगा, तो सब ने गोली यहीं मार देना, चाहे सिविल मरे, चाहे फौजी मरे। सीधा आया वह ऊपर से, टीन लगाया कुली ने चश्मे पर। सिपाही तो बैठ गया परे जैसे, उसके पास राईफल है। क्या किया, टीन का आवाज़ आया न जिस वक्त, ठण-ण-ण-ण, उनको तो भून दिया हमने। जो ऊपर बैठा था, वह साला भाग गया। गोली तो मारा, रात को, लेकिन लगा नहीं उसको। एक सिपाही मर गया, एक सिविलियन जो पानी लेने आया वह खत्म हो गया। पानी भरा हम लोगों ने, पानी भर के उसका राईफल भी ले लिया। उनको छोड़ दिया वहीं। पानी ले आए पीछे, रोटी का तो कोई बन्दोवस्त ही नहीं था। वह सत्तू मिलता था वहां। गांव से खरीदते थे। उस का वह बनाते थे हम 'दू' (=सत्तू नमक-पानी का हलवा बिना घी के)। राशन मिलता नहीं था। दो-तीन दूकानदार थे हुशियारपुर के। जब लड़ाई का पता लगा, शुरू होने वाला है, बन्द करके वह भाग गए।

अब पीछे आकर क्या किया मैंने, एक ऐसे ही रद्दी कागज़ पर लिख दिया मैंने रोमन उर्दू में कि मैं एक एनिमी को मार दिया, उसका राईफल मैं ले आया। रातों-रात एक कुली को भेज दिया नीचे। फटाफट, नीचे को तो एक दम चला गया वह। जहां ऊपर चढ़ने को दो घण्टे लगे थे, वहां नीचे को दस मिनट में पहुंच गया। हरीचन्द के पास चिट्ठी दे दिया उसने। हरी चन्द ने पढ़ा, बोला, वे तोबदन ने तो एक आदमी मार दिया है, राईफल भी ले लिया। उसने उसी वक्त लंगर में आर्डर दे दिया कि अभी खाना तैयार करो। एक बकरा की भेड़ू काट के उसे टीन में कच्चा-पक्का डाल के एक दम आ गए। हरी चन्द भी आ गया। 3-4 बजे चल पड़े, काफी देर से पहुंचे। बोला, कैसे-कैसे किया? मैंने बोला ऐसे-ऐसे हुआ। बोला, यार मेरे को उम्मीद नहीं था, तू ऐसा काम करेगा। ऐसा बोला हरीचन्द ने। बोला बाकी? मैंने कहा, पता नहीं इसके ऊपर कितना एक आदमी है। सुबह के कोई 4-5-6 बजे, फिर वहां से गोली चलना शुरू हो गया, उस पहाड़ से हमारे ऊपर। लगा तो नहीं, क्योंकि वहां पहाड़ ऐसा था कि पत्थर ही पत्थर थे, छुपने के लिए बहुत जगह था, गोली नहीं लग सकता था। फिर मैंने बोला इन हरामज़ादों को एक ढंग करो, इनका गोली खत्म करते हैं। मैंने कहा, लकड़ी ले आओ लम्बा, लकड़ी के ऊपर टोपी लगाओ ऐसा, और खूब ऊंचा करो ताकि फुल गोली आ जाए उस टोपी के ऊपर। ऐसा करते-करते, फिर खाना आया। वह खाया। खाया क्या, बस ऐसा ही समझो। फिर बोला, यार इसको लेना है, इसके ऊपर उनका हैडक्वार्टर हो सकता है। मैंने बोला, देखो साहब, इसके ऊपर पहाड़ तो नज़र आ रहा है, इसके ऊपर एक और नज़र आ रहा है, उस पर चढ़ जाएं तो शायद और पहाड़ हो। इसका तो पूरा देखभाल करना पड़ेगा। फिर मेरे दिमाग में कुछ ऐसा आ गया। सुबह थोड़ा-थोड़ा रोशनी हो गया

था। बोला अब कैसा करना है। मैंने बोला, अब ऐसा करो कि वह जहां से हमने पानी लाया था, उसके ऊपर एक छोटा सा पहाड़ था, अब तमाम एमनिशन और गन वगैरा, यहां फिट कर दो, उस छोटे पहाड़ के ऊपर। अगर हमारा सिपाही वहां पहुंच गए तो फायरिंग के ज़रिए खाली कर देंगे उस पहाड़ को। फिर वह दालंग का रामचन्द और एक लद्दाखी था, दोबज़-दोबज़ नाम रखा हुआ था मैंने उसका, बड़ा जोशीला आदमी था, उन दो को तैयार किया। रात को बारिश हुआ। बारिश होने की वजह से सुबह धुन्ध चलना शुरू हो गया, सामने कुछ नज़र नहीं आ रहा। मैंने कहा, तुम दोनों जाओ, राईफल ले जाओ, जब इसके ऊपर तुम पहुंच जाएंगे तो, एक हैण्ड गर्नेड होता है हमारा, 1.5 पौंड का, उसको फैंक देना पीछे, चाहे दुश्मन को लगे या न लगे। तुमने एक जयकारा बोल देना, लद्दाखी नहीं बोलना, सिक्खों का वह -- 'सो बोले सो निहाल', एक ने 'सत् सिरी आकाल', -- ऐसे बोल देना। तो उनको लगेगा कि हिन्दुस्तानियों का फौज है यह। अगर पता लग गया उन को कि मिलीशिया लड़ रहा है यहां, तो साले हमको तंग करेंगे। हम यहां गन बगैरा तैयार रखेंगे, ऊपर से फायर आ गया तो गोली का जवाब हम देंगे, तुम लोगों ने पीछे हट जाना। जब उस पहाड़ पर पहुंच गए तो उन्होंने गर्नेड मार दिया एक। फैंक दिया तो ज़ोर से बोला, 'सो निहाल'। मैंने कहा, साहब, कुछ नहीं है पहुंच गए। वह दो तो बैठ गए वहीं। फिर क्या किया हमने, बिस्तर तो था नहीं, एक-एक कम्बल, वह भी पतला जैसा, वह ऐसे ओढ़ा जिस्म पर, बोला चलो। जहां पर उन्होंने पोज़ीशन लिया वहीं पर चलते हैं। हथियार, हमारे पास राईफल था, ब्रेनगन, एल.एम.जी. बोलते थे, वह गन था और एमनिशन था। हैण्ड गर्नेड था, 3 पौंड का। मैंने बोला, मेजर साहब चलो। भीम चन्द भी तैयार हो गया, मैं भी तैयार हो गया। उधर जाके देखा तो पहाड़ नज़र नहीं आ रहा है। लेकिन उनका गोली चल रहा है। मेजर साहब ने बोला, तोबदन, अब कैसा करना है। मैं कहा, साहब, मेरे को आ गया समझ। बोला, क्या? मैं बाद में बताऊंगा। फिर खाना-खूना पहुंचा, वह खाया। बैठ गए वहां पर। शाम को कोई 4-5 टाईम, भीम चन्द तो बैठ गया वहीं, मेजर साहब ने बोला, मैं भी चलूंगा। मैं कहा साहब, अब क्या पलान बनाया आपने? बोला, अब तू ही बता क्या करना है। फिर स्टैट फोर्सिज़ का एक सिपाही उस पहाड़ के ऊपर खड़ा हो के पता नहीं क्या देख रहा था, एक दम गोली आया छाती पर, तो खत्म हो गया वह। अब लाश को भेजना था पीछे। उस लाश को भेजने के बाद मेजर को बोला, साहब ऐसा करो, जो मेरे साथ आए सिपाही हैं वह तो मेरे साथ चलेंगे, वह तो मैं ले जाऊंगा साथ। यह जो स्टैट फोर्सिज़ का आदमी है - पीछे पहुंचे थे वह लोग बाद में - मैं कहा, इनको इसी जगह लगा दो। और यह लोग आधा घण्टा, 15 मिनट, 20 मिनट के बाद गोली मारते रहें। ताकि उनका तबज्जो जो है इसी पर रहे कि हां, इसी पहाड़ पर सिपाही बैठे हैं। फिर मैंने क्या किया, अपने सिपाहियों को लिया, सीधा नीचे उतर गया। एक नाला जैसा था वहां। वहां उतरने के बाद, एक बूढ़ा जैसा लद्दाखी था, हमारे साथ, उसके पीठ पर एमनिशन लादा हुआ था हमने, दिहाड़ी पर आया हुआ था वह, उसको पूछा मैंने कि इस पहाड़ के ऊपर चढ़ना हमने, तू बता सकता है, चढ़ने के लिए कहां से रास्ता मिल सकता है। उसने बोला कि मेरे पीठ पर सामान है न, उसको उतार दो तुम, मुझे खाली कर दो, तो मैं सब कुछ बता दूंगा। मैंने कहा, चल ठीक है, एक लेबर (=कुली) को बोला इसका सामान तू ले ले, तू खाली आ रहा है। बस आगे-आगे वह बूढ़ा, पीछे-पीछे मैं चला। बोला यही रास्ता है, यहीं से चलो। नीचे शुरू में जो 30-40 आदमी थे, वह सब साथ ही थे मेरे। मैंने यह सोचा हुआ था उस वक्त कि जिस जगह से वह चढ़ते हैं, उस रास्ते को हमने रोकना है। ताकि उनको पता नहीं लगे, उनको यही लगे कि यह लोग वहीं हैं। मैंने यहां से घूम दे कर जहां से वह चढ़ते थे, जो उनका अपना रास्ता था, वहीं से जाना, वह स्कीम बनाया मैंने। वह बूढ़े ने कोई आधे रास्ते तक पहुंचा दिया। बोला जी, यह पहाड़ है सामने। चलते गए, चलते गए। मेरे से आगे एक रन्जीत-रन्जीत लद्दाखी था। वह फौज से रिटायर होकर 7 न. मिलीशिया में भर्ती हुआ था, एक सिपाही और था। वह दोनों आगे चल रहे थे, मेरे से। ऊपर पहुंचे वह पहाड़ पर। उस पर पाकिस्तान का सात आदमी आया हुआ था। नेस्टिंग पोस्ट था वहां। नेस्टिंग पोस्ट का मतलब होता है, शाम को आना उधर, आके शाम को बैठ जाना वहां, सुबह छह-सात बजे वह रकी करेंगे उधर, देखभाल करना कि दुश्मन

तो नहीं चढ़ रहा ऊपर, वह देख के दिन को अपने हैडक्वार्टर में वापस चले जाना। शाम को फिर छ-सात बजे चढ़ेगें। उन्होंने एक बंकर बनाया हुआ था। बंकर का मतलब, पत्थर का चिनाई करके हवा का रोक और बचाव के लिए टापरा जैसा बनाया हुआ था। उसके अन्दर 6-7 आदमी बैठ सकते थे। बंकर के आगे जिस जगह से हम चढ़े, एक बहुत बड़ा पत्थर था। चार-सढ़े चार फुट से ऊंचा नहीं था लेकिन चौड़ाई में पता नहीं कितना फुट था। उसके पीछे वह दोनों पहुंच गए, उन्होंने देख लिया, एक दम से पीछे आ गए, बोला, बंकर है यहां तो। उस बंकर से सोचो कोई 30-40-50 गज़ पर मैं चल रहा था। मैं कहा फटाफट जाओ नीचे उनको पता करो तुम्हारा बाप यहां बैठा हुआ है। जल्दी बुलाओ उनको। वह दो चले गए पीछे। मैं आगे जाके उस पत्थर के पीछे बैठ गया। वहां पहुंच के देखा मैंने, ओ हो, इसके अन्दर तो आदमी हैं। जब देखा इसके अन्दर आदमी हैं, तो मेरे पास था हैण्ड गर्नेड। उनका जो सन्तरी था न, वह कहीं जंगल पानी चला गया हुआ था, उसने एक सिविलियन कुली को खड़ा कर दिया वहां, वह मुसलमान था, सफेद पगड़ी बांध के रखा था उस ने। जैसे छली के खेत में भालुओं को भगाते हैं, वैसा शोर मचाना शुरू कर दिया कि कहीं कोई भालू तो नहीं आ रहा। जब मेरे को वह पगड़ी नज़र आया तो मैंने एक दम, वह पौच बोलते हैं हम, पौच होता है, एक ऐसा थैली की तरह बना हुआ, उसके अन्दर गर्नेड डाला हुआ था मैंने। वह गर्नेड का पिन निकाला मैंने बाएं हाथ से, दाएं से पकड़ा - वह बिल्कुल नज़दीक था 20-25 गज़ भी नहीं था, और मेरे आगे एक पत्थर था बहुत बड़ा, छुपने के लिए। अगर उनका गोली आ जाएगा तो मैं बच जाऊंगा। मैंने एक दम क्या किया, गर्नेड को निकाला, हाथ से फैंक दिया। वह गर्नेड

II-गोरखा राईफल्ज़ - लेह पहुंचने पर

सीधा उस बंकर के अन्दर चला गया। बड़म्म की आवाज़ आया तो उसके अन्दर जितने भी थे, 5-6 आदमी, सारे के सारे खत्म हो गए। उसके बाद वह सन्तरी आया। उसने सोचा यहां तो गोली-गाली चला ही नहीं, ज़रूर अपना ही गर्नेड फट गया। अब उसने अपना बचाव करना था, पीछे जा कर क्या बताऊं। ड्यूटी देने वाला संन्तरी मैं हूं। उसने क्या किया - एक लूप होल होता है, बंकर के अन्दर एक ताकी की तरह देखने के लिए, वहां से गोली भी मार सकते हैं। उस लूप होल से उसने एक दो बार फायर किया गन से - टर-टर-टर, टर-टर-टर, उतने को पीछे से टशी पहुंच गया मेरे पास। ज़ंखर का था वह, स्टोरी तो उसका भी भेजा था आगे, पर उसको नहीं मिला। मैंने बोला, ओ टशी, लगा अब यहां गन, एल.एम.जी. था उसके पास। टशी ने गन लगाया, जहां से मैंने गर्नेड मारा था उसी पत्थर के ऊपर। ओ उसने छोड़ा ही नहीं, टर-टर-टर-टर, बस लगातार रहा। आगे से बन्द हो गया जवाब आना, गोली आना। फिर उतने को मेरे पास पांच-दस आदमी और आ गए। पहुंच गए न फिर, जब गोली का आवाज़ सुना तो उन सारे का पेशाब छूट गया, ऊपर तो भई लड़ाई शुरू हो गया, इन्होंने तो बचना नहीं है, चलो चढ़ो जल्दी-जल्दी। उस वक्त मेरे को भी नहीं लगा पता कि कितना आदमी चढ़ा, कितना नहीं चढ़ा। बस धामण-धूसड़ में हो गया। मैंने बोला ऐसा करो कि भई इस के अन्दर से तो कोई जवाब नहीं आ रहा, अब घेरा मारना है। कुछ आदमी इधर से जाओ, कुछ आदमी उधर से जाओ घेरा मारकर, अगर इसमें आदमी होगा तो हमने पकड़ लेना। यहां से तीन-चार आदमी मैं अपने साथ ले गया। दो-तीन आदमी जो मेरे आगे-आगे थे, उन्होंने भी गोली मारना शुरू कर दिया। सब को बोला हुआ था कि गोली मारते-मारते जाओ। उतने को दो

आदमी और निकले, पता नहीं कहां पत्थरों के बीच छुपे हुए थे ऐसे-ऐसे करके आ रहे हैं अब गोली मारना था, उन्होंने। मैंने दूसरा गर्नेड निकाला, मारा उनको। गर्नेड का ऐसा होता है कि 300 गज़ दूर तक जाते हैं उसके लोहे के टुकड़े। नज़दीक 8-9 गज़ तक जो आदमी आएगा उसको खत्म कर देता है। बर्फ था बहुत, 30 जुलाई को बारिश भी हुआ। बिल्कुल नर्म था बर्फ। वह गर्नेड बिल्कुल बर्फ के बीच में चला गया - शुर-र-र-डम्म! धमाका तो हुआ न, वह दूर नहीं गया, बर्फ ने ठंडा कर दिया। लगा नहीं वह। मैंने कहा, मारो-मारो गोली उनको। सारे का हाथ ठंड से ऐसा पड़ा हुआ, जाम। मैंने कहा मारो-मारो गोली, किसी ने गोली नहीं मारा। मेरे पास था वह राईफल, मैंने एकदम ऐसे किया, क्या कहते हैं - एक होता है एम.के.एम. कर के गोली, वह मारा, दोनों को मैं खत्म कर दिया। अच्छा, उसके बाद क्या हुआ, मैंने कहा भई चक्कर मारो यह तो देखभाल करना पड़ेगा, कितना आदमी मर गया, कितने कहां छुपे हुए हैं। उसके बाद एक आदमी और निकला, दाहिने हाथ में उसने राईफल पकड़ा, बायां हाथ खड़ा करके आ रहा है। हम को गोली मत मारो, पकड़ लो। हमने बोला हैंड्ज़-अप। मैंने कहा, राईफल नीचे फैंक दो, और दोनों हाथ खड़े करो। मैं कहा, पकड़ लो इसको। पकड़ने के बाद हम क्या करते हैं। फटा-फट, रूमाल हो या जो भी हो, उसके आंखों पर पट्टी बांध देते हैं और हाथों को पीछे बांध देते हैं। ताकि उसको नज़र न आए कि कितने आदमी हैं क्या है। अब मैंने क्या किया, 2-3 सिपाही छोड़ दिया, मैं कहा तुम इस कैदी के साथ बैठो, मैं जाता हूं आगे। उतने को एक सिपाही ने बोला इस पत्थर के नीचे दो आदमी और हैं, तो मैंने बोला, निकलो बाहर। वह साले क्या किया, गोली मार दिया ऊपर को, मेरे को, वह गोली ऊपर पत्थर पर लग गया, मेरे को तो नहीं लगा। मारो, मैंने कहा, साले को। बाहर नहीं निकल रहे हैं वह लद्दाखी थे मेरे साथ, चलो, डम-डम-डम, वह दोनों को मार दिया।

फिर मैंने क्या किया, उन का हैडक्वार्टर तो नीचे रह गया, मैं ऊपर चढ़ गया। अब नीचे को चलना भी मुश्किल हो गया, एक-एक पांव रखो तो इतना -इतना डूब जाता है बर्फ में, बीच में पत्थर हैं। ऐसा करते-करते चले। नीचे था उनका लंगर-शंगर, पाकिस्तानियों का, खूब हलवा-शलवा बनाया हुआ था उन्होंने वहां। उनका कोई 100-150 से ज़्यादा आदमी थे शाम को। वह सब भाग गए वहां से, लंगर-लुंगर सारे छोड़ के। एक चूरू बांधा हुआ था उन्होंने, रात को काटना था कि पता नहीं क्या करना था। जाते-जाते, नीचे एक नाला था, उस नाले से जाते हुए नज़र आए। अब शाम का भूखा था, कुछ देर बैठ गया वहां, 30 जुलाई की बात है। धूप लगा हुआ था शाम का कोई 2-3 बजा होगा। फिर मैं बौंड-बाई-बौण्ड गया। मैंने कहा, देखो पोज़ीशन ले लो सारे। पांच-छह आदमी थे मेरे साथ। मैंने कहा तीन आदमी लेट जाओ यहां, तुम गोली मारो। पधरा जैसा था, यहां उनका हैडक्वार्टर या कुछ ज़रूर होगा। मैं कहा, तुम यहां गोली मारते रहो, ये तीन सिपाही आगे बढ़ेंगे। जब ये लोग फलां जगह पर पहुंच जाएंगे, ये पोज़ीशन लेंगे, ये गोली मारते रहेंगे उस लाइन के ऊपर, तो ये आगे बढ़ेंगे। ऐसा करते-करते मैं उनके लंगर में पहुंच गया। लंगर में पहुंचा तो उन्होंने एक पतीले में हलवा बनाया हुआ था। हलवा खाना था उन्होंने। फिर मेरे सिपाही जो रात के भूखे थे, वह खाने को तैयार हो गए। मैं कहा, वे हरामज़ादो, मत खाना यह। बोला, क्यों? मैं कहा, क्या पता अगर ज़हर डाल के गए हों तो तुम सारे खत्म हो जाएंगे। मैंने एक लात मारा बूट के साथ पतीले को दूर फैंक दिया। हलवा-हुलवा सारा गिर गया ज़मीन पर। खोजबीन किया वहां कुछ कम्बल-शम्बल मिला, कुछ ब्रण्डी-ब्रुण्डी मिला, कुछ ऐसा-वैसा। वह चूरू भी खोल दिया हमने। मैं कहा ऐसा करो, दुश्मन तो भाग गए सारे। नाले के पार एक पहाड़ था, उसके ऊपर चढ़ गए। मैं कहा, अब इसको बचाना है। हम कहते हैं, कौण्टर अटैक। वह तो भाग गए, हम लोग नया नया पोज़ीशन लेते हैं, तो थोड़ा मुश्किल होता है। उस वक्त वह एक दम हमला कर देते हैं, तो उसमें हम हार जाने का डर होता है। उसको बोलते हैं कौण्टर अटैक। मैं कहा, साले कहीं कौण्टर अटैक न कर दें, फटाफट पोज़ीशन ले लो यहां। चार-पांच आदमी वहां लगा दिया, चार-पांच आदमी यहां लगा दिया। मैं कहा तुम नाले में गोली मारना शुरू कर दो ताकि कौण्टर अटैक न कर सकें।

अब पहाड़ पर जहां वह कैदी छोड़ा था, वहां पहुंच गया मेजर हरीचन्द। उसने बोला वह तोबदन कहां गया? तो उन सिपाहियों ने बोला कि यह कैदी पकड़ा

हमने, हमें तो बोला कि यहां बैठ जाओ, इसका हिफाज़त करो, कि पीछे से मेजर साहब आ रहा है, वह करेंगे। नीचे जो शुरू में पोज़ीशन था हमारा, वहां था भीमचन्द बैठा हुआ और एक सैकिण्ड लेफ्टीनेंट गोरखा था, बूढ़ा जैसा। वह दोनों वहां थे। ऊपर से मैसेज भेजा मेजर हरी चन्द ने कि तोबदन का कोई पता नहीं है, उसके आदमियों का भी पता नहीं लग रहा है, ज़िन्दा है कि मर गया, क्या हुआ, क्या नहीं हुआ। तुम पता करो उसका। अब वह नीचे वाले क्या पता लेंगे। उधर कोई पता नहीं है। दुश्मन का जो लंगर या पोज़ीशन था वह यहां से काफी नज़दीक था। क्योंकि अब हम लोग नीचे उतर चुके थे। मैंने एक आदमी भेज दिया उधर कि पता कर दो कि हम लोग यहां तक पहुंच गए हैं। दुश्मन भाग गया है। पीछे हमने पोज़ीशन ले लिया है। तब उन्होंने ऊपर मैसेज भेजा मेजर हरीचन्द को कि तोबदन ने दुश्मन का हैडक्वार्टर कलीयर कर दिया है। और वहां पहुंच गया है। आप उसकी कोई चिंता मत करो।

फिर क्या हुआ, मेजर हरीचन्द ने वह कैदी को भेज दिया फ्यङ-तरु में जहां हमारा हैडक्वार्टर था, वहां से लेह में भेजना था। वह हरामज़ादों ने क्या किया, जो तीन सिपाही भेजा था लद्दाखी, उनको भी क्या पता बेचारों को 15-20 दिन तो ट्रेनिंग दिया था कि भई दुश्मन को कैसे ले जाते हैं, ले तो गए। एक मकान में बन्द कर दिया उसको, खुद भी बैठ गए सालों ने क्या किया, लुगड़ी-शराब पीना शुरू कर दिया। सारे नशे में हो गए, वह कैदी ने देख लिया। उसने क्या किया, नज़दीक में लकड़ी था कि पता नहीं क्या था, दो-दो मारा उनके मुंह पर। ज़ख्मी कर दिया सिपाहियों को और खुद भाग गया। जहां हमारा हैडक्वार्टर था, वहां एक बहुत बड़ा दरिया था। वह जाकर दरिया में पहुंच गया। आधा दरिया उसने पार कर लिया। उतनें में हैडक्वार्टर में जो सिपाही था वह तड़के जंगल पानी जा रहा था। देखा कि भई यह कौन दरिया टप रहा है। उनको शक हो गया, तो फिर पकड़ लिया उन्होंने। ऊपर मैसेज आया कि रात का कैदी जो है भाग गया। ओ, मै बोला, यार कितना मेहनत से पकड़ा था, वह भाग गया। अरे वह कैसे हुआ? बोला, ऐसे-ऐसे हो गया। बाद में मैसेज आया कि हमने पकड़ लिया उसे। मै कहा, चलो अच्छा हुआ।

तो उतने को, जहां मैंने उनका हैडक्वार्टर लिया था, मेजर हरी चन्द भी पहुंच गया। उसने मेरे को ऐसे थप्पी मारा, बोला तोबदन, देखो अब मेरा कलम कैसे चलता है। तो मै एक सिपाही था, मैंने सोचा मेरे को परमोशन मिलेगा, और क्या होगा। मैंने यही सोचा। परमोशन का बड़ा शौक था मुझे। उसने फटा-फट नीचे आर्डर भेजा कि वहां जितने भी गोरखा हैं नीचे से आया हुआ, उनको यहां भेजो और जो सिक्ख, जम्मू स्टेट का है उनको भी यहां भेज दो। जब ऊपर पहुंच गए वह, तो मुझे बोला तू अपना सिपाही बगैरा ले जा कर आराम करो। बोला, नीचे हवाई जहाज़ आया है कुछ रम-शम आया होगा, एक दो पैग शाम को पी लो। फिर वहीं उसने भीम चन्द के साथ बैठ कर बनाया होगा स्टोरी-सुटोरी।

पहले शुरू में इस पहाड़ के लेने के लिए मैसेज भेजा हुआ था श्रीनगर में कि यहां हवाई जहाज़ से बम फैंको। हवाई जहाज़ रकी भी करके गया था। उसने देखा कि इस के ऊपर बम फैंकेंगे तो इस पर वह टिकेगा नहीं, इधर-उधर चला जाएगा। यह पहाड़ तो ऐसा है शंकू की तरह। हवाई जहाज़ ने इन्कार कर दिया । हरी चन्द ने मैसेज भेजा पीछे हैडक्वार्टर में जहां कर्नल पृथी चन्द वगैरा थे, कि हमने यह पहाड़ ले लिया है। फिर पृथी चन्द ने श्रीनगर मैसेज भेजा होगा। तो उस वक्त था हमारा चीफ कमाण्डर मेजर जनरल थिमैया। उसको पता लगा कि वह पहाड़ को ले लिया है। वह एक दम हवाई जहाज़ में बैठ के लेह में उतर गया। लेह में उतर गया तो पूछा होगा, भई कैसे-कैसे लिया? बोला जी ऊपर ही पता होगा, हमें भी पता नहीं है। क्या किया, कौन-कौन थे। कौन है इन्चार्ज? बोला जी, मेजर हरी चन्द। उसको मैसेज आया कि आप नीचे आओ। हरी चन्द उतर गया नीचे। मैंने सोचा उनका अगर ज़्यादा आदमी होगा तो शायद कौण्टर अटैक कर देंगे। तो मै वहीं बैठा हुआ था। रात को शराब आया रम, एक-एक, दो-दो पैग पिया। बैठ गया आराम से। खाना भी पहुंच गया। वहां सर्दी भी नहीं लगता था साला, रात को बारिश भी हुआ। 30 जुलाई की बात है यह 1948 की। तो थिमैया आए हुए थे, उन्होंने पूछा कि कैसे-कैसे किया। हरी चन्द ने बोला कि ऐसे-ऐसे हुआ। फिर मेरे को बुलाया नीचे। नीचे बुलाया तो दो-तीन दफा उसने मेरे

शेष पृष्ठ 49 पर...

प्वाईन्ट 5203 तथा डॉगहिल पर लद्दाख स्काउट्स का धावा

'कि की सो सो, लार गे लो!' *एक सैनिक का संस्मरण*

18 सितम्बर, 1998 को मैं लद्दाख स्काऊट्स में भर्ती हुआ था। एक साल तक ट्रेनिंग के बाद 25 अक्तूबर, 1989 को हमारा पास-आऊट हुआ था। फिर हमें प्रतापगढ़ सैक्टर में तैनात किया गया। वहां चुमथासेरी में हम तकरीबन एक साल तक रहे। यहां पर पांच देशों की सीमाएं पड़ती हैं। 1991 से 1993 तक हम छुशुल क्षेत्र में रहे, जहां चीन की सीमा पड़ती है। 1994 में हमें श्रीनगर भेजा गया और दो साल तक ज़िला बारामूला में रहे। उसके बाद 1996 में दोबारा लेह में आए और इंडस विंग हैडक्वार्टर में रहे। नवम्बर, 1998 को हमें सियाचिन ग्लेशियर भेजा गया। वहां पर तकरीबन दो महीने की अवधि पूरा करने के बाद दोबारा लेह में आए। जनवरी, 1999 में हमें बेलगाम कमांडो सेन्टर, कर्नाटक में भेजा गया। हमारी इस कम्पनी में 94 आदमी थे, जिनमें से 10 लड़के हम लाहुल के थे। इधर हमारे कमांडो ट्रेनिंग के लिए आते हैं, एक और पी.सी. कोर्स भी चलता है। हमारा काम उन को डेमो देना (= प्रदर्शन देना) होता है। स्पैशल इसी के लिए हम को रखा जाता है। वहां पर पांच महीने तक हम रहे। फिर अचानक 3 जून, 1999 को हमारे को आर्मी हैडक्वार्टर से मैसेज आया कि आप लोगों को करगिल के लिए बुलाया गया है।

इस तरह अचानक मैसेज मिलने पर, हमारे पास न तो कोई तैयारी थी, न कुछ, हथियार भी नहीं थे। तो हमारे को 5 जून को वहां से गोवा एक्सप्रेस से दिल्ली भेज दिया गया। 7 जून को हम दिल्ली पहुंचे, निज़ामुद्दीन स्टेशन से सीधे हमें पालम हवाई अड्डे पर ले जाया गया। 8 तारीख को हम लोग लेह में पहुंचे। लेह में लद्दाख स्काउट्स हैडक्वार्टर में एक दिन आराम करने के बाद हमारे को 10 तारीख को करगिल भेजा गया। 10 और 11 तारीख को हम वहां रहे। 12 जून को हमें वहां हमारे प्रधान मंत्री श्री अटल विहारी वाजपेयी के गार्ड के लिए लगाया गया। उस के बाद 13 जून को बटालिक सैक्टर में धा-हनु के लिए हमारे को भेजा गया। 14 तारीख की रात को हम लोग धा-हनु में पहुंचे और वहां हमारे लिए एक कमांडिंग अफसर दिया गया - मेजर दीपक पांडे। उन्हीं की कमान में हम लोग 14 तारीख की शाम को बेस की तरफ चले और रात को तकरीबन एक बजे बेस कैम्प में पहुंचे।

अगले दिन भर आराम करने के बाद 15 तारीख शाम को हम लोग मेन तारगेट की तरफ चले। बेस के आगे दिन को हरकत करना मना है। जब हम लोग चले तो तकरीबन 10-11 बजे हमारा कम्यूनिकेशन भी ठप्प हो गया। आगे जाने के लिए न हमारे पास कोई गाईड था। गाईड नहीं होने से हमारे को रास्ता नहीं मिला और हम लोग गलत रास्ते से चले गए। अचानक हमारे ऊपर दुश्मन का पूरे तरीके से फायरिंग आना शुरू हो गया। हमारे लिए तो उस वक्त बहुत ही मुश्किल हो गया था, छुपने के लिए। पता नहीं चल रहा था कि गोली किधर से आ रही है। कुछ पता नहीं चल रहा था, बस बिल्कुल अंधेरी रात में! अचानक हमारे पीछे से कुछ आदमी आए और उन्होंने कहा कि आप पीछे हट जाओ, यह अपने ही यूनिट जैक (जम्मू एण्ड कश्मीर) राईफल्ज़ का फायर है। तो हम लोग बड़ी मुश्किल से छुपते-छुपते वापिस आए। तकरीबन एक घंटा तक हम वहां रहे। उसके बाद करीब एक-डेढ़ कि.मी. पीछे जाने के बाद दोबारा हमारा पूरा कम्पनी जो बेलगाम से आया था, सब इकट्ठा हुए। हमारे जो अफसर थे वह एक दिन पहले ही आगे निकल गए थे। हमारे जो जूनियर कमीशन्ड अफसर थे, उन्हीं के साथ हम लोग चल रहे थे। वहां पर तकरीबन एक घंटा रुकने के बाद पीछे से हमारे लिंक वाले जो आते हैं, उन्हीं के साथ आगे चल पड़े। वहां से एक घंटे के बाद, हमारा जो मेन बेस था, उधर हम पहुंचे। रात को हम उधर ही सोए।

उस वक्त लद्दाख स्काउट्स का हमारा एक कम्पनी पहले ही पहुंच चुका था, उन्हीं के साथ हमारे को शामिल कर लिया गया। रात को सोने के बाद, सवेरे वहां पर कोई हरकत नहीं कर सकते क्योंकि जिस नाले से हम जा रहे थे, उसके दोनों तरफ की पहाड़ियों पर दुश्मन भरे हुए थे। तो दिन भर आराम करने के बाद शाम को हमें ब्रीफ़िंग मिला कि प्वाइंट 5203 पर हमने दो दिन के बाद हमला करना है। तो उस के प्लानिंग के बारे हमारे जो सी.ओ. साहब थे, चन्दोक साहब, उन्होंने हमारे मेजर साहब, पांडे साहब को ब्रीफ़िंग किया। मेजर साहब ने सब को शाम को फिर ब्रीफ़िंग किया कि अगले दिन हम ने उस पर अटैक करना है।

18 तारीख की शाम के तकरीबन 8 बजे हम

प्वाइंट 5203 के लिए रवाना हुए। तो वहां से फिर ऐसा हुआ कि हमारा कम्यूनिकेशन (=संचार) में कुछ दिक्कतें आ गईं। कम्यूनिकेशन पूरा नहीं होने से हमारा कुछ पार्टी वहां से भटक गया। इस से काफी मुश्किलें आईं उधर। हमारा प्लान (=योजना) था कि सवेरे फस्ट लाइट यानि दिन खुलते-खुलते हमने दुश्मन के ऊपर हमला करना है। तकरीबन रात 12 बजे से दुश्मन का पूरे तरीके से हमारे ऊपर फायर आ रहा था और वह फायर लगातार चलता ही रहा। हम लोग वहां पर उस दिन नहीं पहुंच पाए। हमारे दो जवान भी मारे गए उस दिन। जो चार ग्रुपों (=समूहों) में हम लोग ऊपर चढ़े थे, वह ग्रुप सवेरे 7 बजे दोबारा वापिस आ गए। इन चार ग्रुपों में हमारे लाहुल के आठ बन्दे थे। 3 एक ग्रुप में, एक ग्रुप में एक, बाकी दो में दो-दो थे। मेरे ग्रुप में दो ही थे। एक मैं और एक मड़ग्रां का था। जब हम लोग सब नीचे पहुंचे तो हमने देखा कि मेजर साहब का पार्टी जो है, नहीं आया है। वह लोग दिन भर वहीं रह गए। एक दिन पूरा वहां रहने के बाद तकरीबन रात के आठ बजे मेजर साहब वापिस आ गए। शाम को हम को हुक्म मिला था कि उन को ढूंढने के लिए जाओ, लेकिन तब तक हमारा जो कम्यूनिकेशन बन्द हो गया था, वह बहाल हो गया था। इस पार्टी से एक जवान लापता हो गया था। उसका डैड-बॉडी (=पार्थिव शरीर) हमें तीन-चार दिन बाद मिला था। ऐसा होता है कि कम्युनिकेशन को जाम कर देते थे उधर। उनको हमारे फ्रीक्वैन्सी (=रेडियो तरंगों की लम्बाई) का पता चल जाता है। हमारा और उनका फ्रीक्वैन्सी एक कर देते हैं और ऊपर से प्रेस कर देते हैं। इससे बातचीत नहीं हो पाती। उस दिन तो हमारा अटैक सफल नहीं हो सका।

ऑपरेशन विजय अभियान

दो दिन बाद हमारी कम्पनी को फिर से टास्क (=कार्य) मिला। कुछ और फोर्स (=सैन्य बल) दिए थे। हमारे को दूसरे कम्पनी और जैक राईफल्ज़ के कुछ आदमी दिए थे। पीछे से हमारे को मदद देने के लिए, मतलब कवर (=गोलियों का आवरण) कर रहे थे जैक राईफल्ज और फाईव (5) पैरा। उस दिन फिर फुल प्लानिंग (=पूर्ण योजना-बद्ध होकर) के साथ गए थे, अटैक के लिए। उस दिन हम को आर्टीलरी (=तोप खाना) का सहयोग भी बहुत अच्छा मिला था। तकरीबन रात भर जिस तरह हम लोग ऊपर चढ़ते जा रहे थे, आर्टीलरी का सप्पोर्ट (=सहयोग) हमारे ऊपर था। आर्टीलरी के गोलाबारी का जो रेंज है तकरीबन वहां तक जब हम पहुंचे तो आर्टीलरी का फायर बन्द हो गया। ऊपर से पाकिस्तान का फायर हमारे ऊपर जारी था। हम लोग ठीक 4 बजे ऊपर पहुंचे, फिर हम ने फटाफट एक साथ कम्युनीकेशन ठीक कर के उसी वक्त अटैक कर दिया। अब यह तो अंधेरे की बात है। उस वक्त कुछ पता नहीं चलता है, गोलियां चलती हैं दबा के, अपनी तरफ से भी, उनकी तरफ से भी। साढ़े चार बजे के बाद उनकी तरफ से बिल्कुल बन्द हो गया था। तो तकरीबन रात भी खुलने लगा था। पांच बजे के बाद हमने सर्च (=खोजबीन) शुरू कर दिया था। वहां हरेक जगह पर छुप-छुप कर जा के। जैसे उनका टैंट हैं, बंकर हैं, सब जगह जो भी है वहां, उसका हमने सर्च किया। हमारे को वहां सिर्फ तीन डैड बॉडी मिला था। पीछे की तरफ चट्टान थी, पाकिस्तान के बाकी लोग उधर से रस्से लगा कर पीछे उतर गए थे। जो पहाड़ था, उस पर बेन्ड (=घुमाव) था। इसलिए वह लोग हम को दिखते नहीं थे। तकरीबन छह बजे, नीचे जो हमारे सी. ओ. थे, उनको ओ.के. रिपोर्ट दिया कि हमारा पोस्ट कैप्चर (=कब्ज़ा) हो गया है। वह पोस्ट ऐसा था, यानि कि उसको लेने के बाद हमारा एक तरफ की पहाड़ी क्लियर हो रहा था। यह मुख्य पहाड़ी थी जहां से पाकिस्तानी हमारे मेन बेस की निगरानी करते थे। ठीक उस पहाड़ी के नीचे हमारा बेस था। यह पहाड़ी लेना जो है, हमारे हिसाब से बहुत ही महत्वपूर्ण था। इस पहाड़ी को लेने के बाद उनका आर्टीलरी सप्पोर्ट जो है बहुत की कमज़ोर पड़ गया। क्योंकि उनके ओ.

पी. (=निगरानीकर्ता) भी यहां रहते थे, जहां से वे डिग्री, दूरी, जो कुछ, जहां भी हरकत होती थी, सब बता देते थे। इसलिए यह हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण पहाड़ी थी। उस दिन हमारा कोई भी जवान का केजुअल्टी (=हताहत) नहीं हुआ। यहां पर हमने कुछ हथियार, गोली बारूद, पहाड़ पर चढ़ने की रस्सियां, टैंट वगैरा कब्ज़े में लिया था जो सब चीन के बने हुए थे। हथियार तो ज़्यादा नहीं मिले थे, दो ही राईफल थे, कोई खास किस्म के थे वह। उसके बाद एक मेजर साहब और 25 आदमी तैनात करके बाकी को नीचे भेज दिया था। नीचे आकर हम लोग तकरीबन 10 दिन बेस में रहे।

बेस के सामने वाली पहाड़ी प्वाईंट 5203 जो हमने लिया था, उसके ठीक सामने डोग-हिल है। वहां से दुश्मन का फायर हमारे ऊपर दिन रात लगातार चलता रहता था। आर्टीलरी फायर भी आ रहा था, लेकिन थोड़ा दूर पड़ जाता था। बाकी जो छोटे हथियारों का फायर था, वह तो सीधा हमारे ऊपर ही पड़ता था। वहां पर यह था कि हम लोग जितना भी छुपते थे, वहां बड़े-बड़े पत्थर थे। उन्हीं के बीच में छुप के बैठते थे हम लोग दिन को। क्योंकि अब एक तरफ से पहाड़ी साफ हो गया था, इसलिए अपने दाईं तरफ से हमें कोई चिंता नहीं थी, उसी तरफ जा के बैठते थे शाम को। समस्या सिर्फ बाईं तरफ से थी। शाम को ब्रेकफास्ट, लन्च तथा डिनर एक साथ पहुंच जाता था नीचे बेस से। क्योंकि वहां से जो लिंक्स (=सम्पर्क) होता है वह भी रात को ही होता है। जब तक बेस से भोजन नहीं आ जाता हम सूखे फल आदि लेते हैं जो हम लोग साथ ले जाते हैं।

फिर हम को दिया गया डोग हिल। यह था हमारे लिए सबसे ज़्यादा खतरनाक पहाड़ी। क्योंकि वहां पर जाने के लिए एक ही रास्ता था जहां से हमें अटैक करना था। अब हमारा जो लद्दाख सकाऊट्स है उसमें एक स्पैशल ट्रेनिंग चलता है - पर्वतारोहण का। हमारे जितने भी जवान हैं सब को यह कोर्स कराया जाता है। यही ट्रेनिंग फायदा दिया उस दिन हमारे को। वहां पर एक-एक करके चढ़ना पड़ता है। क्योंकि वहां रास्ता ही ऐसा था कि हम एक ही साईड से चढ़ सकते हैं। उस दिन उधर के लिए हमको टास्क (=कार्य) मिला। चार कम्पनियां थीं हमारी, उसमें लाहुल के हम 18 आदमी थे, जिनमें छह खम्पे भी शामिल थे, जिन्होंने उस अटैक में भाग लिया। इस बार हमें अपने सी.ओ. साहब के कमान में उस पे हमला करना था उस दिन। फिर शाम को हम चल पड़े। वहां अटैक जो होता है रात को ही होता है। रात को ही चढ़ते थे हम। उसमें एक समस्या यह हो गई कि जैसे ही हम ऊपर पहुंचे, दुश्मन को पता चल चुका था कि नीचे से हिन्दुस्तान का अटैक आने वाला है। जैसे-जैसे रस्से से हम ऊपर चढ़ रहे थे, एक के बाद एक हमारे पांच जवान का केजुअल्टी (=हताहत) हो गया। उसके बाद हम लोग फटा-फट, फटा-फट, जल्दी-जल्दी निकलने लगे। हमारा जो छटा आदमी निकला था, उसने उस पर फायरिंग दिया जहां उनका ओ.पी. बैठा हुआ था। ओ.पी. उनका वहीं पर मारा गया। उसके बाद फटा-फट हमारी प्लाटून के कई आदमी ऊपर चढ़ गए। पहले जब हम चढ़ते जा रहे थे, तब यह पता नहीं था कि उनका ओ.पी. किधर है। हमारे पांच आदमी मारे गए इसी वजह से। फिर पीछे आने वाले को मालूम पड़ गया कि इनका ओ. पी. इस तरफ है तो पीछे से हम लोगों ने उस ओ. पी. के ऊपर अटैक कर दिया था। उस ओ.पी. को मारने के बाद हम लोग सभी जब 25-30 आदमी ऊपर चढ़ गए तो सब ने घेर लिया उनको। तब तक हमारा सब आदमी चढ़ते गए, चढ़ते गए। पूरे आदमी ऊपर चढ़ गए। पहुंचते ही दबा के फायरिंग शुरू कर दिया था हमने। फिर यह पोस्ट कैप्चर कर लिया हमने। उनके 12 आदमी मारे गए। हमारा अन्दाज़ा है कि इस पोस्ट में कम से कम 30-40 आदमी उनके रहे होंगे। जो फ्रंट (=सामने) में थे वह सब मारे गए और जो पीछे थे वे भाग गए। यहां पर दुश्मन का हथियार बहुत मिला। यू.जी.एम. राईफल, ऐ.के.-47, एयर क्राफ्टगन, वगैरा भारी मात्रा में मिला। एम्यूनिशन (= गोली बारूद) भी बहुत मिला। यानि कि तकरीबन एक बटालियन का हथियार मिला था वहां हमारे को। राशन मिला, मिट्टी का तेल मिला। एक प्लाटून का तकरीबन 5-6 महीने का भण्डार था उधर। ज़्यादातर हथियार और सामान, टैंट वगैरा चीन के बने हुए थे, कुछ कोरिया और यू.एस.ए. के भी थे।

डोग हिल में पाकिस्तान की तरफ अपनी तरह खड़ी चढ़ाई नहीं है, रास्ता अच्छा है। और वहां से नीचे 2-3 कि.मी. आगे जाने पर उन्होंने एल.ओ.सी.

शेष पृष्ठ 45 पर...

करगिल युद्ध-आगामी सहस्राब्दी में खतरे की घंटी

-छेरिंग दोंजे

इन पंक्तियों को लिखते समय करगिल युद्ध में भारतीय सेनाओं को विजयश्री प्राप्त किए हुए प्राय: छह मास बीत चुके हैं। ऐसी कौन सी स्थिति है जो पाकिस्तान को कश्मीर में बार-बार युद्ध करने और घुसपैठियों द्वारा तोड़-फोड़ और नरसंहार करने पर विवश होना पड़ रहा है? जबकि पाकिस्तान अच्छी तरह जानता है कि कश्मीर और जम्मू राज्य का विलय भारत गण राज्य के साथ वहां के महाराजा हरिसिंह ने सितम्बर, 1947 को कर दिया था। फिर भी आज पाकिस्तान के कब्ज़े में जम्मू-कश्मीर का एक बहुत बड़ा हिस्सा, जिसे तथाकथित आज़ाद कश्मीर कहा गया है, पर अनधिकृत कब्ज़ा जमाए बैठा है।

इन सब तथ्यों के जानने क लिए हम मध्य एशिया की पहाड़ी श्रृंखलाओं और अति विशाल मरुस्थल के देशों और लद्दाख, अफ़गानिस्तान और तिब्बत के पिछले डेढ़ सौ वर्षो के राजनैतिक इतिहास पर एक सरसरी नज़र डालें।

उस समय रूस और इंग्लैंड एशिया में अपने-अपने प्रभुत्व को जमाने में एक दूसरे से आगे निकलने की कोशिश में लगे थे। रूस ने एक लम्बी और नुक्सानकून युद्ध के पश्चात कोह-काफ के कबीलों को परास्त कर अपने राज्य में मिला लिया था, और अब वह तेज़ी से एशिया में आगे निकलना चाहता था। मध्य एशिया के प्राचीन मुस्लिम खानों द्वारा शासित राज्य, खीबा, खोरबन्द और बुखारा पर कब्ज़ा जमाया और आगे प्रसिद्ध रेशम मार्ग के व्यापारिक नगर काशगर, यारकंद और खोतान पर भी कब्ज़ा करना चाहता था। इधर अग्रेंज़ भारत पर कब्ज़ा जमाने के पश्चात भारत के उत्तर-पश्चिमी राज्य अफ़गानिस्तान और कश्मीर पर अपना राजनैतिक प्रभाव मज़बूत करना चाह रहा था और तिब्बत पर भी प्रभाव डालना चाहता था। भारत के उत्तर में अब रूसी प्रभाव का क्षेत्र प्राय: कश्मीर तक फैल चुका था। रूसी खुफिया एज़ेसियों द्वारा पंजाब में महाराजा रंजीत सिंह और लद्दाख के ग्यल्पो को रूसी शासक ज़ार के तोहफ़े और पत्र लाए जा रहे थे। अंग्रेज़ों ने भी अपने राजनैतिक प्रभाव मध्य एशिया के मुसलमान शासकों तक अपने साहसिक अधिकारियों द्वारा स्थापित करने का यत्न आरम्भ कर दिया था। राजनैतिक पंडितों ने इस राजनैतिक खेल का नाम ग्रेट-गेम अर्थात महाक्रीड़ा रखा था। अग्रेज़ों ने कश्मीर में श्रीनगर, गिलगित और लेह में अपने पोलीटिकल एजेंटों की नियुक्ति कर रखी थी ताकि वह रूस की तरफ से हर एक राजनैतिक हरकत पर नज़र रख सकें। इसी प्रकार तिब्बत में ग्यगिचे, थातुगं और गरतोग में ट्रेड एजेंटों की नियुक्ति कर रखी थी। ईस्ट-इण्डिया कम्पनी ने कलकत्ता से अपने दो साहसिक अधिकारियों कर्नल चार्ल्स सटोडार्ट और कप्तान आर्थर कोनूली को मध्य एशिया में बुखारा के खान के पास 1842 में भेजा था। परन्तु उस खान ने इन दोनों को मार डाला। 1862 में डगलस फोर्स का मिशन लाहुल और कश्मीर के मार्ग से लेह होते हुए मध्य एशिया के नगर यारकंद गया था। जिसमें लाहुल के ठाकुरचन्द ने बड़ी होशियारी से अपने कदमों से नाप कर यारकन्द शहर का नक्शा तैयार किया था। इस प्रकार इस महाक्रीड़ा में लाहुल के एक साहसी ठाकुर ने भाग लिया था।

1847 में कर्नल गोरडन मिशन की रिपोर्ट में विशेष उल्लेख था कि रूसी फौज चितराल और गिलगित तथा लद्दाख के मार्ग से भारत में पहुंच सकती है जो रूसियों को खुफिया द्वार का कार्य कर सकते हैं। अंग्रेज़ इस क्षेत्र की सुरक्षा और रूसी गतिविधियों को लेकर सदैव चिंतित और सतर्क रहते थे। क्योंकि इस क्षेत्र का सामरिक दृष्टि से महत्व था और इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि इन क्षेत्रों पर दुश्मनों के कब्ज़ा करने का अर्थ भारत पर मुसीबत है।

द्वितीय विश्व महायुद्ध की समाप्ति पर संसार के मानचित्र पर कई नए देश उभर कर आए। भारत अंग्रेज़ों की गुलामी से मुक्त होकर स्वतन्त्र देश बना। परन्तु महाक्रीड़ा के खेल में निपुण अंग्रेजों ने इस महान देश को जाति के आधार पर दो टुकड़ों में बंटवा कर हिन्दोस्तान और पाकिस्तान बना दिया, जिसके फलस्वरूप आज भी हिन्दोस्तान और पाकिस्तान का मन-मुटाव न मिट सका। यही कारण है कि पाकिस्तान कश्मीर को लेकर रोना रो रहा है और उग्रवादी भेज कर आतंक फैला रहा है।

कुछ वर्षो तक इस महाक्रीड़ा का खेल ठंडक में पड़ा रहा, परन्तु सोवियत रूस में साम्यवादी शासन के पतन के पश्चात इस देश के खण्डहर से रातों-रात आठ नए देश पैदा हो गए। प्राचीन मुस्लिम खानों द्वारा शासित देश फिर नए रूप में उभर कर मध्य एशिया के नक्शे में पैदा हो गए, परन्तु इस बार इनका

संचालन खानों के हाथों में नहीं, अपितु कट्टरवादी मुस्लिम नेताओं के हाथ में है। साथ ही सोवियत रूस से सीखे सैनिक आणविक शक्तियों की जानकारी और ज़खीरा भी। इन देशों के पास खनिज तेल का भी अपार भण्डार भी है। इसके अतिरिक्त सोना-चांदी और अन्य कीमती खनिज पदार्थ भी प्रचुर मात्रा में मिलने की संभावना भी। कट्टरपंथी मुस्लिम देश ईरान, अफ़गानिस्तान, और पाकिस्तान जैसे देश यहां के नव शासकों में कट्टरपंथ का बीज बोना चाहते हैं और अपना उल्लू सीधा करना भी। औसामा-बिन-लॉदेन जैसे मुस्लिम आतंकवादी अफ़गानिस्तान में डेरे डाले यही खिचड़ी पकाने में लगे हैं और गैर मुस्लिम देशों को मुसलमानों का शत्रु बताकर, इन नए देशों की जनता को उकसा रहे हैं। इस हालात में भारत को कश्मीर की सुरक्षा पर अधिकाधिक ध्यान केन्द्रित करना पड़ेगा।

अब की बार फिर वही पुराना खेल मध्य एशिया के इस अखाड़े में आरम्भ हो चुका है। जिसे राजनैतिक पड़ितों ने नवमहाक्रीड़ा कहा है, जिसको 21वीं शताब्दी में खुलकर खेलने की संभावना है।

इस बार इस नव महाक्रीड़ा में शामिल विश्व का सबसे शक्तिशाली देश अमेरिका है और दूसरा देश वही पुराना खिलाड़ी रूस है। इसके अतिरिक्त इस खेल में भागीदार बनने वालों में तुर्की, ईरान और पाकिस्तान भी हैं। चीन, कोरिया और भारत भी नज़र जमाए खड़े हैं।

प्राय: हम यह सोचते आ रहें है कि शीतकाल में कश्मीर की पहाड़ियों में बर्फ गिरने के पश्चात आतंकवादियों का भय घाटी में कम हो जाएगा। परन्तु लद्दाख और करगिल के बारे यह सोच गलत है। सिंधू नदी के साथ-साथ लद्दाख से गिलगित का मार्ग सर्दियों में आवा-जाही के लिए अधिक सुविधाजनक बन जाता है जब सिंधू नदी का पानी जमकर यख की मोटी चादरों में तबदील हो जाता है। लोग यख पर चलकर नदी के साथ-साथ आसानी से आ जा सकते हैं। वज़ीर जोरबर सिंह ने बालतिस्तान विजय में सिंधू के जमे हुए मार्ग का ही उपयोग किया था। इसलिए हमें लद्दाख और करगिल की सुरक्षा के लिए शीतकाल में भी सचेत रहना होगा।

1948 में जब गिलगित स्काऊट्स और कबायली गौरिलों ने बालतिस्तान और करगिल पर कब्ज़ा करने के पश्चात लेह की ओर बढ़ रहे थे। यह लोग भी फरवरी मास में गिलगित से सिंधू नदी के साथ-साथ चले थे। तत्पश्चात भारतीय सेना करगिल को पाकिस्तान कब्ज़े से छुड़ाने में इसलिए सफल हुए थे कि उन्हें एक अन्य मार्ग, लाहुल होते हुए लेह पहुंचने का पता दिया गया था। इस मार्ग की जानकारी देते हेतु लाहुल के दो नवयुवक देशभक्त नेता ठाकुर देवी सिंह और ठाकुर शिवचन्द ने दिल्ली जाकर तत्कालीन प्रधान मन्त्री स्व० जवाहरलाल नेहरू को इस मार्ग की जानकारी दी। यह दोनों प्रधान मन्त्री के आग्रह पर भारतीय सेना की पहली टुकड़ी के साथ मार्ग दिखाने हेतु लेह तक गए। और पीछे से आने वाली सेनाओं को सुचारू रूप से प्रबन्ध करने के लिए इन नेताओं ने एक संचालन समिति का गठन लाहुल के प्रथम राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सदस्य टशीदावा की नेतृत्व में किया था। जो नियमित रूप से लेह जाने वाली सेना के लिए रसद और सामग्री ढोने वाले घोड़ों और खच्चरों का प्रबन्ध बिना विलम्ब करते थे। इस प्रकार लाहुल से लेह जाने वाली मार्ग द्वारा लेह और करगिल को पाकिस्तानियों के हाथ जाने से रोका जा सका था। आज इस मार्ग को मोटर वाहन चलने योग्य बना दिया गया है परन्तु केवल ग्रीष्म मास के चार महीने ही आवा-जाही होती है। आवश्यकता है इस मार्ग पर आने वाले रोहतांग जोत को सुरंग निर्माण कर बारामासी यातायात के लिए खोलने का प्रबन्ध किया जावे। इस सुरंग के बन जाने से लेह और करगिल सुरक्षित हो जाएंगे।

पृष्ठ 43 का शेष भाग....

(वास्तविक नियंत्रण रेखा) के इस तरफ एक टम्प्रेरी (=काम चलाऊ) हेलीपेड भी बना रखा था वहां। इसी से इतना सारा हथियार और सामान यहां लाया गया।

इस तरह 1 जुलाई, 1999 को हमने डोग हिल को कैप्चर कर लिया था। तकरीबन 4 बजे के बाद हम लोगों अटैक किया था। 7 बजे तक सारा सर्च (= खोज-बीन) वगैरा कर के अपने-अपने स्थान पर तैनात हो गए थे। फिर काऊंटर अटैक (= पलट कर हमला) का भी डर रहता है। वहां पर नज़दीक से काऊंटर अटैक का खतरा नहीं था। दूर से ही होता था। हम लोग सुरक्षित जगह में बैठ जाते हैं। एक दिन तक तो बहुत फायरिंग चलता रहता है। फिर हमारा पूरा कम्पनी वहीं पर तैनात कर के रखा गया।

अलंकरण एवं वाचन-पत्र

1948 में भारत-पाक युद्ध के समय लद्दाख क्षेत्र में किए गए उनके वीरता के कारनामों के लिए क० पृथीचन्द को महावीर चक्र, मे० खुशाल चन्द को महावीर चक्र, कैप्टन भीम चन्द को दो बार वीर चक्र तथा सिपाही तोबगेराम को वीर चक्र से अलंकृत किया गया था। जबकि हवलदार तन्ज़िन फुन्चोग को 1962 के भारत चीन युद्ध के समय चङ ला मोर्चे पर उनके अदम्य साहस एवं देश की रक्षा के लिए प्रोणोत्सर्ग करने पर मरणोपरान्त महावीर चक्र से अलंकृत किया गया था। यहां इन वीर सैनिकों के अलंकरण के अवसर पर पढ़े गए वाचन-पत्रों को संकलित किया गया है। *-संपादक*

वाचन-पत्र

कर्नल पृथी चन्द, महावीर चक्र (सेवानिवृत्त)

पिता का नाम :
जन्म : 1-1-1911
परिवारिक निवास: खंगसर (कोठी कोलोंग)
भर्ती : 13 सितम्बर, 1939
शिक्षा : हाई स्कूल कुल्लू से मैट्रिक
अलंकृत : 1948

फरवरी, 1948 में मेजर पृथी चन्द ठाकुर सेना के 18 बटालियन की एक टुकड़ी का नेतृत्व कर रहे थे, जो लद्दाख की रक्षा व्यवस्था करने के लिए कश्मीर की घाटी से लेह को गई थी। वे वीर सिपाहियों की इस छोटी टुकड़ी को कड़ाके के जाड़े में भी ज़ोजिला दर्रे के पार ले गए। यद्यपि उस समय बड़े ज़ोर की बर्फ पड़ रही थी किन्तु उनके पास बर्फ से बचने का कोई उपाय नहीं था। जम्मू-कश्मीर की राजकीय फौज के बचे-खुचे भाग में से उन्होंने दो प्लाटूनों की कमान अपने हाथ में ले ली और मई, 1948 तक उन्होंने शीघ्र ही 200 स्थानीय जवानों की एक फौज संगठित की। इस समय तक शत्रु बल्तिस्तान पर कब्ज़ा कर चुका था, करगिल पर घेरा डाले था और लेह दर्रे की ओर बड़ी तेज़ी से बढ़ रहा था। इस थोड़ी सैन्य शक्ति की सहायता से उन्होंने डट कर छापामार युद्ध में शत्रु का मुकाबला किया। वे बार-बार शत्रु पर धावा करते रहे। वे बड़ी तेज़ी से छिप-छिप कर शत्रु पर आक्रमण करते थे। यदि एक दिन वे सिन्धु घाटी में होते थे तो दूसरे दिन उस स्थान से 80 मील की दूरी पर स्थित नुबरा घाटी में दिखाई देते। उन्होंने यह सारी लड़ाई सत्तू खाकर लड़ी। यह अफसर अपनी सैन्य व्यूहन की क्षमता, अदम्य उत्साह और वीरता के कारण ही कठिन संकट के समय लद्दाख की रक्षा कर सका।

इनके नेतृत्व में 2 बटालियन डोगरा रैजिमेंट के 'एक्स' कॉलम में निम्न अधिकारियों और सिपाहियों ने हिस्सा लिया-

1. स्व. लै.कर्नल खुशाल चन्द, महावीर चक्र (तब मेजर), गांव गेमूर, कोठी कोलोंग, लाहुल एवं स्पीति
2. कैप्टन भीम चन्द, वीर चक्र एवं बार (तब सूबेदार), गांव मैह, कोठी कोलोंग, लाहुल एवं स्पीति
3. नायक तोबगे राम, वीर चक्र (तब सिपाही), गांव नुकर, कोठी गोंधला, लाहुल एवं स्पीति
4. नायक मिंडोल, गांव मैह, कोठी कोलोंग, लाहुल एवं स्पीति
5. लांस नायक नावांग, गांव क्वारिंग, कोठी गुमरांग, लाहुल एवं स्पीति
6. लांस नायक करम सिंह, गांव जिस्पा, कोठी कोलोंग, लाहुल एवं स्पीति
7. सिपाही फुन्चोग, गांव योचे, कोठी कोलोंग, लाहुल एवं स्पीति
8. सिपाही सोनम अंगरूप, लाहुल एवं स्पीति
9. सिपाही सोनम, लद्दाख, जम्मू-कश्मीर
10. सिपाही लोबज़ंग, लद्दाख, जम्मू-कश्मीर
11. सिपाही टशी छेरिंग, लद्दाख, जम्मू-कश्मीर
12. सिपाही टशी, ज़ंस्कर, जम्मू-कश्मीर
13. सिपाही बहादुर सिंह, किन्नौर, हि.प्र.
14. सिपाही दिलीप सिंह, ज़िला कांगड़ा
15. सिपाही पटवारी मल, (सिग्नल्ज़) ज़िला कांगड़ा
16. श्री सोनम नोरबू, लद्दाख, अभियंता जम्मू-कश्मीर

मेजर (लेफ्टिनेंट कर्नल, मृत) खुशाल चन्द, महावीर चक्र, एक्स. 7 बटालियन, जम्मू एण्ड कश्मीर मिलीशिया/लद्दाख स्काऊट्स। मूलतः 2 डोगरा से।

जन्म : 26 सितम्बर, 1929
पारिवारिक निवास: गांव गेमुर, केलंग
कमीशन प्राप्त : 15 सितम्बर, 1941
अलंकृत : 1947/48
धर्म : बौद्ध
टिप्पणी : 1957 में विमान दुर्घटना में मारे गए।

फरवरी, 1948 में मेज. खुशाल चन्द उन दो अधिकारियों में से एक थे जिन्होंने लेह जाकर लद्दाख घाटी में एक स्थानीय मिलीशिया खड़ी करने और वहां की सुरक्षा का संचालन करने के लिए स्वेच्छया की। चार महीनों के लिए मेज. खुशाल चन्द ने जम्मू एण्ड कश्मीर राजकीय बल के एक प्लाटून और जल्दबाज़ी में प्रशिक्षित किए लगभग बीस स्थानीय मिलीशिया के जवानों के साथ शत्रु का दक्षिण की ओर सिंधु घाटी से होते हुए लेह की ओर का बढ़ना स्थगित करके रखा। इन्होंने चतुराई से छापामार युद्ध का नेतृत्व किया, जिससे शत्रु को यह आभास हुआ कि इनके पास वास्तविकता से कहीं अधिक आदमी हैं। एक समय इन्होंने अकेले एक सिपाही के साथ खलत्से पुल पर 24 घण्टों तक अधिकार बनाए रखा और बाद में उसे आग लगा दी। इससे शत्रु को एक और सप्ताह तक रुकना पड़ा।

इन पूरे अभियानों के दौरान, बिना उपयुक्त भोजन, बिना मोर्टारों, और गोली-सिक्के की भारी तंगी के बावजूद, मेज. खुशाल चन्द ने अपनी छोटी सी टोली का नेतृत्व प्रबलता और चतुराई से किया और अपने अतिसाहस की मिसाल कायम करके अपना कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न किया। इस प्रकार इन्होंने भारतीय सेना की ऊंची परम्पराओं को कायम रखा और अपने साथ काम करने वालों के लिए शानदार उदाहरण पेश किया।

सूबेदार (सूबेदार मेजर एवं ऑनरेरी कैप्टन सेवानिवृत्त) भीम चन्द, वीरचक्र एवं बार, 2-डोगरा

जन्म : 17 दिसम्बर, 1905, खंगसर (मेह)
पिता : श्री फुन्चोग रबग्य
भर्ती : 22 सितम्बर, 1939
धर्म : हिन्दू
अलंकृत : 23 अगस्त, 1948

पाकिस्तान के खिलाफ अगस्त, 1948 के अभियान में सूबेदार भीम चन्द को 18,500 फुट पर स्थित लम्रिंग्मो पर कब्ज़ा करने का आदेश मिला। अत्यंत ऊबड़-खाबड़ इलाके में रात-भर कठिनाई से पैदल चलने के बाद वह शत्रु के पीछे से निकले। इन्होंने शत्रु के गोली-सिक्के और युद्ध के सोज़ोसामान के भण्डारों को नष्ट कर दिया। इनके सफल आक्रमण के कारण शत्रु के पांव उखड़ गए और वे अपने पीछे अनेक शव और एक कैदी छोड़ गए। अक्तूबर में बाग्सो में इन्होंने 3.7 इन्च के हॉवित्ज़र को नष्ट किया। नवम्बर में फिर इन्होंने लम:युरु में स्थित शत्रु के गोली-सिक्के के बड़े भण्डार को बरबाद कर दिया।

इस जे.सी.ओ. ने उच्च कोटि की वीरता, दृढ़ता और शांतचित्तता का प्रदर्शन किया। इन्होंने अपने रेजिमेंट की उच्चतम परम्पराओं को जीवन्त रखा।

वीरचक्र बार

अलंकृत : 27 दिसम्बर, 1948

सूबेदार भीम चन्द को छापामारों का एक प्लाटून लेकर लेह तहसील में शत्रु के आखिरी मोर्चे पर अधिकार करने का आदेश मिला। अपने उद्देश्य तक पहुंचने के लिए इनको रस्से, गैंतियों और बेलचों का प्रयोग करना पड़ा और बर्फ के ढकी 22,000 फुट (6600 मीटर) ऊंची चोटियों को पार करना पड़ा। इनके प्लाटून के 50 प्रतिशत सैनिक हिमदंश (फ्रॉस्टबाइट) के शिकार हो गए परन्तु सूबेदार भीम चन्द अपना कार्य सम्पन्न करने के प्रति विश्वस्त और दृढ़निश्चियी थे। अंतत: 27 दिसम्बर, 1948 को इन्होंने आकस्मिक हमला करके शत्रु के ठिकानों पर कब्ज़ा जमा लिया। शत्रु भाग गए और अपने पीछे छ: शव, तीन राईफलें, ब्रेनगन की मैगज़ीनें, कम्बल व अन्य भण्डार छोड़ गए। इस अभियान में इस जे.सी.ओ. ने ज़बरदस्त सहनशक्ति, कर्त्तव्यनिष्ठा, उच्च संगठन क्षमता और अपने उद्देश्य को पाने के लिए असाधारण दृढ़निश्चय का परिचय दिया।

सिपाही तोबगे राम, 2 डोगरा। वीरचक्र

नाम : श्री तोबगे राम (नं.13286)
पिता : श्री सोनम डुगिया
गांव : नुकर

जन्म : जुलाई, 1919
भर्ती : 1940
शिक्षा : दूसरी (सेना)
सेवानिवृत्ति : 1962
अलंकृत : 30 जुलाई, 1948

सिपाही तोबगे राम लद्दाख की घाटी में एक मिलीशिया प्लाटून की कमान कर रहे थे। 30 जुलाई, को शत्रु के एक स्थान पर जो 17,000 फुट की ऊंचाई पर स्थित था, आक्रमण करने और अधिकार में लेने के लिए उनको आदेश हुआ। मूसलाधार वर्षा में इस प्लाटून ने शत्रु की भारी ब्रेनगन और राईफल की निरंतर फायर के बावजूद भी इस पहाड़ी स्थान को घेर लिया। अंत में प्लाटून उस स्थान की चोटी पर शत्रु के मोर्चे के पिछले भाग से पहुंच गया और शत्रु को वहां से पीछे हटने के लिए विवश कर दिया। यद्यपि तोबगे राम एक सिपाही थे, फिर भी उन्होंने नेतृत्व की अद्‌भुत शक्ति दिखलाई। उन्होंने साहस और निश्चयात्मकता के अपने व्यक्तिगत उदाहरण से अपनी कमान की स्थानीय मिलीशिया को अभीष्ट स्थान पर अधिकार करने योग्य बना दिया।

भारत चीन युद्ध - सन 1962

तेन्ज़िन फुन्चोग, महावीर चक्र (मरणोपरांत), एक्स एम. बटालियन, जम्मू एण्ड कश्मीर मिलीशिया, 7 लद्दाख स्काऊट्स

जन्म : 17 जून, 1929, गांव सिसू, केलंग
पिता : श्री वङ्ग्यल
भर्ती : 17 जून, 1948
अलंकृत : 27 अक्तूबर, 1962
धर्म : बौद्ध

हवलदार तेन्ज़िन फुन्चोग लद्दाख में चांगला चौकी पर सहायक कमांडर (2-आई.सी.) के पद पर थे। 27 अक्तूबर, 1962 की सुबह चीनियों ने चौकी पर भारी गोलाबारी की और अत्यधिक संख्या में आक्रमण किया। हवलदार फुन्चोग ने अदम्य साहस का प्रदर्शन करते हुए शत्रु को भारी क्षति पहुंचाई। एक इंच भी भूमि छोड़े बिना वह अपने मोर्चे पर तब तक डटे रहे जब तक कि पराभूत होकर मारे नहीं गए। इन्होंने उच्च कोटि के साहस और कर्त्तव्यनिष्ठा का प्रदर्शन किया।

श्रद्धांजलि

राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा के लिए जो बलिदान भारतीय वीर सैनिकों ने दिए हैं वे बेमिसाल हैं। ऑपरेशन विजय की रक्तरंजित गाथा अपने आप में इनके धैर्य, शौर्य और कुर्बानी की मिसाल बन चुकी है। इनको श्रद्धांजलि देते हुए दैनिक जागरण के नरेन्द्र मोहन लिखते हैं "शौर्य, पराक्रम और तेजस्विता की अमर भूमि पांचाल प्रदेश को शत-शत प्रणाम। कल जिसे हम पांचाल क्षेत्र के नाम से पुकारते थे, यह क्षेत्र आज पंजाब-हिमाचल के नाम से जाना जाता है। रणबांकुरों की यह जन्मभूमि भारत के स्वाभिमान की प्रतीक है। उस स्वाभिमान की प्रतीक, जिसे जीवित रखने के लिए पंजाब-हिमाचल के हर गांव ने अपनी शहादत दी है। यह वह वीर प्रसविनी भूमि है जिसके रणबांकुरे और पराक्रमी योद्धा अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए सहस्त्रों वर्षो से आत्मोत्सर्ग करते रहे हैं और आज भी कर रहे हैं। इसका नवीनतम उदाहरण है कारगिल। इन महावीर योद्धाओं का आत्मबल ही इनका शस्त्र बना है। और शस्त्र बना है गुरु गोविंद सिंह जी का यह महावाक्य ***'सवा लाख से एक लड़ाऊं, चिड़ियों से मैं बाज लड़ाऊं'*** तथा गीता और गुरबानी का यह अमर संदेश कि आत्मा अजर है, अमर है।

आज चन्द्रताल परिवार 1948 के कारगिल युद्ध से लेकर ऑपरेशन विजय तक राष्ट्र की आन-बान-शान के लिए स्वयं को कुर्बान करने वाले रणबांकुरों को शत-शत नमन व श्रद्धांजलि प्रस्तुत करता है, जिनके अदम्य साहस, बलिदान, से भारतवर्ष का मस्तक गौरव से आज भी ऊंचा है। यदि हमारे सैनिक अपने प्राणों की परवाह न करते हुए हिमालय की बर्फीली चोटियों व कंदराओं से दुशमन का सफाया नहीं करते तो आज जम्मू-कशमीर-लद्दाख क्षेत्र, जो कि भारतवर्ष के मस्तक का द्योतक है, हमसे छिन चुका होता। ऐसे वीर सैनिकों को पुनः शत-शत प्रणाम और श्रद्धांजलि!

पृष्ठ 40 का शेष भाग...

को पीठ पर थप्पी मारा, जनरल ने। हरी चन्द को बोला, इसका स्टोरी बनाओ। इस का शुरू से आखीर तक स्टोरी बना कर श्रीनगर भेजो। उसने नहीं बोला कि मैं क्या स्टोरी बना रहा हूं। मैंने तो सोचा मेरे को परमोशन मिलेगा ही, देखते हैं क्या मिलता है। उसने सब का स्टोरी बनाया, उस टशी का भी नाम दिया हुआ था मैंने कि ऐसे गन रखा, ऐसे-ऐसे किया। पूरा स्टोरी बना कर भेज दिया।

सन् 48 से 50, दो साल तक कुछ नहीं मिला। वहां जब लड़ाई खत्म हुआ, पाकिस्तान के साथ सीज़-फायर हुआ तो मैं अपने यूनिट 2 डोगरा में वापिस आ गया। सन् 50 में मैं जब आगरे में पहुंचा तो एक दिन मैं लैट्रीन जा रहा था बोतल ले के। तो बाहर हमारे जूनियर अफसर वगैरा एक जगह बैठ कर गप्पे मार रहे थे। वहां एक एजूकेशन का नायब सूबेदार था, वह अग्रेज़ी अखबार ले के बैठा हुआ था। उसने बोला होगा, सिपाही तोबगे राम कौन है तुम्हारे यूनिट का। उतने को मैं निकला बाहर, दिन के कोई 1-2 बजे के करीब। मेरे को इशारा किया कि इधर आ जाओ। चला गया मैं, पता नहीं क्या बात है, अभी लेह से यूनिट में आया ही था। तो वह एजूकेशन का ऑफीसर ने बोला कि बोलत रख दे नीचे। बोला, अब इन सब के साथ हाथ मिलाओ। मैंने कहा, किसलिए, क्या वजह? मैं कहा, मुझे परमोशन मिल गया, मैंने यही सोचा। सारे के साथ हाथ मिलाया, बोला, मुबारक हो, मुबारक हो। मैंने बोला, किस चीज़ का मुबारिक? कुछ भी नहीं बोला पहले। फिर एजुकेशन वाले अफसर ने कहा कि आप को वीर-चक्र मिला है। लेह में जो आपने काम किया है उसके लिए आपको वीर-चक्र मिला है। हल्ला मच गया यूनिट में। एक यूनिट में कोई हज़ार एक आदमी होते हैं। ओ हल्ला मच गया सारे में। ओ तोबगे राम को वीर-चक्र मिल गया, लेह में, क्या-क्या किया उसने। उसके बाद यूनिट कमांडर था कर्नल एक, साला नालायक आदमी, उसने मेरे को ऑफिस में बुलाया। और परमोशन भी क्या दिया उस साले ने मेरे को - एक अनपैड लांस नायक। बोला जी इसको अनपैड (=बगैर तनखा बढ़ाए) लांस नायक बना दो। अच्छा जी, ठीक है।

बाद में फिर मुझे ट्रेनिंग सेन्टर जालंधर बुलाया, वहां आया। उस के बाद दिल्ली बुलाया मेरे को, शायद सन 1951 में, राष्ट्रपति के पास। मेडल फिर भी नहीं मिला, ऐसे ही खाना-पीना, मुबारक-शबारक हुआ। फिर हमारा यूनिट आगरा से बदली हो कर कश्मीर चला गया। कश्मीर में तंगधार-तंगधार एक बार्डर था, वहां थे हम। फिर वहां मैसेज आया मेरे को कि पंजाब गोरमैंट तेरे को बुला रहा है। उस वक्त चीफ-मिनिस्टर था, प्रताप सिंह कैरों। अरे अब वहां बर्फ पड़ा हुआ, जोत टपना पड़ता है। फिर यूनिट कमांडर ने कहा, इस को भेजना पड़ेगा ज़रूरी, किसी भी ढंग से। 3-4 सिपाही और तैयार कर दिया जोत टपने के लिए, नीचे आ के तो फिर गाड़ी मिल जाता है। फिर मैं वहां से चण्डीगढ़ पहुंचा। एक गैस्ट हाऊस में रखा उन्होंने मेरे को। फिर मेडल देने के लिए गवर्नर-हाऊस में बुलाया मेरे को। पता नहीं किस सन की बात है, शायद 1952-53 की बात है। वहां तब मेडल दिया मेरे को गवर्नर ने। फिर एक दिन चीफ-मिनिस्टर के पास खाना पीना हुआ। एक था कमलनैन की क्या नाम, वह हमारे कांगड़ा में डी.सी. रहा हुआ। वह चीफ सैक्ट्री था। एक दिन उसके पास खाना हुआ। यह खाना मेरे अकेले के लिए नहीं, ओ हमारे बड़े-बड़े जनरल थे, उनको भी वीर-चक्र वगैरा मिला हुआ था, वह सारे इकट्ठे हो गए वहां, उनके साथ खाना-पीना हुआ। उसके बाद फिर वहां से अपने यूनिट को वापस आ गया। बस, ऐसी-ऐसी बातें हैं जी।

आईये, लिखिये, पढ़िये, आईये, लिखिये, पढ़िये, आईये, लिखिये, पढ़िये, आईये, लिखिये, पढ़िये, आईये, लिखिये,

स्वंगला एरतोग

उद्देश्य :

1. सांस्कृतिक विरासत को संजोना व संकलित करना व उन्हें प्रकाश में लाना, पुनर्जीवित व संवर्धित करना।

2. लोक विधाओं को चिह्नित करना जो लुप्त होने के कगार पर हैं।

3. साहित्यिक रुचियों का विकास व सृजन के प्रति रुझान पैदा करना।

4. सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक उत्थान के लिए एक मंच बनाना जहां विचारों का सम्प्रेषण एवं जन प्रतिक्रिया का आकलन संभव हो।

स्वंगला एरतोग

लाहुल-स्पीति में कला व संस्कृति उत्थान हेतु सोसाइटी (रजि०)

पोस्ट बॉक्स 25, मुख्य डाकघर ढालपुर, कुल्लू 175 101 (हि०प्र०)

सोसाइटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट 21,1860 के अधीन पंजीकृत संख्या ल०स०/42/93

स्वंगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक सतीश कुमार द्वारा नमन, कुल्लू से टाईप सेटिंग तथा मुद्रित एवं (नीरामाटी) कुल्लू, से (हि०प्र०) से प्रकाशित। संपादक सुश्री छिमे शाशनी।